योगविद्या

वर्ष 9 अंक 2
फरवरी 2020
सदस्यता डाकखर्च – रु100

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरिः ॐ

योगविद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है। देर से सदस्यता ग्रहण करने पर भी उस वर्ष के जनवरी से दिसम्बर तक के सभी अंक भेजे जाते हैं।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2020

पत्रिका की सदस्यता एक वर्ष के लिए पंजीकृत की जाती है। कृपया अपने आवेदन अथवा अन्य पत्राचार निम्नलिखित पते पर करें –

बिहार योग विद्यालय
गंगा दर्शन,
फोर्ट, मुंगेर, 811201
बिहार

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।

कुल पृष्ठ संख्या : 58 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर : स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

अन्दर के रंगीन फोटो 1-4 : बाल योग दिवस उत्सव

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

श्रद्धा

मनुष्य की श्रद्धा से पता चलता है कि उसका चरित्र कैसा है। श्रद्धा पर्वत को हिला सकती है। श्रद्धा के बल पर आश्चर्यजनक कार्य हो सकते हैं। श्रद्धा आपको ईश्वर के अन्त:कक्ष तक पहुँचा सकती है। श्रद्धा आपको दिव्य बना सकती है। श्रद्धा से आप शान्ति, आध्यात्मिक शक्ति, मुक्ति, अमरत्व और परमानन्द प्राप्त कर सकते हैं। अत: ईश्वर के अस्तित्व, शास्त्रों, गुरु के वचनों और स्वयं पर निष्कपट और जीवन्त श्रद्धा रखिए।

श्रद्धा अनमोल दुर्लभ पुष्प है। अपने हृदय की वाटिका में इसे अवश्य लगाइए। इसे प्रतिदिन सद्भाव के जल से सींचिए। संदेह और शंकाओं की खर-पतवार को पूरी तरह साफ करते रहिए। तभी इसकी जड़ें गहराई में जायेंगी और शीघ्र ही भक्ति रूपी फल लगेगा।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी ज्ञानभिक्षु सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद–121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योगविद्या

वर्ष 9 अंक 2 फरवरी 2020
(प्रकाशन का 58 वाँ वर्ष)

विषय सूची

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती की षष्ट्यब्दपूर्ति के उपलक्ष्य में समर्पित यह विशेषांक उनके प्रत्येक दशक की चयनित कृतियों का संकलन है

7 आत्मसुधार यज्ञ
9 सत्यम् सुमनांजलि
10 गुरु की आवश्यकता
12 मेरी यौगिक संस्कृति
14 मनोनियंत्रण का साधन
16 शक्ति की खोज में
21 आत्मा की निर्मलता
22 चिदाकाश का सिद्धांत
23 योग की भावी रूपरेखा
26 योग – पूर्णता का मार्ग
32 साकार एवं निराकार भक्ति
35 बच्चों-युवाओं हेतु योग
38 आत्मशुद्धि और आत्मभाव
40 जीवन-उद्यान के माली बनो
42 स्वर्ण जयंती
44 ध्यान का मन पर प्रभाव
47 नेपालवासियों के नाम संदेश
51 प्रत्याहार

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिक:। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

स्वामी धर्मशक्ति के नाम पत्र

महासमुन्द
12-11-1959

सुनो धर्मशक्ति, जो भी हो रहा है ईश्वरेच्छा से हो रहा है, तुम मानव इच्छा से ऊपर उठ चुकी हो। तुम्हें जरूरत न हो, पर देश को तो जरूरत है। यह बच्चा युग की माँग है, तुम तो निमित्त हो, मात्र बोझा ढोने वाली। यह बच्चा सत्यव्रत-बसन्ती का नहीं, समाज, देश, विश्व का होगा। जैसे ब्रह्मा जी के मानस-पुत्र शंकर जी हैं, वैसे ही यह सत्यम् का मानस-पुत्र होगा। धर्मशक्ति, तुम यशोदा माँ का यह बालकृष्ण होगा। यशोदा की गोद में नन्दगाँव में बाल-लीला के पश्चात् यह विश्व उसका द्वारका क्षेत्र बनेगा। समझो धर्मशक्ति, जिसे तुम अपने खून से सींच रही हो, वह फूल संसार को सौरभ से भर देगा।

तुम्हें गमले के पौधे का निर्माण नहीं करना है, उस वटवृक्ष का निर्माण करना है, जो अक्षयवट से भी महान् हो। धर्मशक्ति, उस पर मोह नहीं करना, उसे धरोहर समझना। सत्यम् का यही आशीर्वाद है कि तुम यथार्थ में माँ बनो, अपने अंश से ऐसे सूर्य का निर्माण करो जो अज्ञानांधकार दूर कर दिव्य ज्योति फैलाये।

निरंजन का जन्म

श्रीमती रत्ना ब्यौहार (स्वामी धर्मशक्ति की छोटी बहन), रायपुर

14 फरवरी 1960, सुबह आसमान में चमकता भोर का तारा धरती पर उतर आया। विश्व को निरंजन के रूप में एक देदीप्यमान् सितारा मिला। जो माँ किसी समय एक बच्चे के लिए आग्रही थी, गुरु ने उसे एक बच्चे के साथ हजारों-हजार की माँ बना दिया। भोर होते ही मुझे सुसंवाद के साथ कक्ष में जाने की अनुमति मिली। दीदी के होंठों पर मुस्कान थी और नन्हें-मुन्ने दिव्य आभा में चमक रहे थे। उनके ललाट पर शिवानन्द कुटीर, ऋषिकेश का कुमकुम और भस्म लगा हुआ था।

कुल पुरोहित भी आए। माँजी ने सुबह 4 बजे ही समाचार भेज दिया था। उन्होंने आते ही कहा, 'मैं बहुत खुश हूँ। जानते हो, जब ब्रह्माजी ने वशिष्ठ जी को राजपुरोहित बनकर अयोध्या जाने का आदेश दिया, तब वशिष्ठ जी ने हाथ जोड़कर कहा, महाराज! मैं राजपुरोहित नहीं बनूँगा क्योंकि राजा के साथ रहने पर भली-बुरी बातों का ज्ञान नहीं रहता। इस पर ब्रह्माजी ने कहा, एक दिन वहाँ राजकुमार के रूप में प्रभु का जन्म होगा और तुम उनके राजपुरोहित बनोगे। यह सुनकर वे खुश होकर चले गये। और आज मेरा भी वही दिन आया है। मैं देख सकता हूँ कि यह बच्चा किस प्रयोजन से आया है।' माँजी ने बच्चे को कपड़े में लपेटकर दूर से दिखाया। उन्होंने कहा, 'दूर से क्यों दिखाते हो, गोद में दो, मैं आज कितना खुश हूँ कि मेरी गोद में राम आ रहा है!'

उनके जन्म के तैंतीस दिन बाद स्वामी सत्यानन्द जी मुंबई से राजनाँदगाँव आये और उन्हें गोद में लेकर पुकारा, 'निरंजन, निरंजन।' मैंने उनसे पूछा भी, 'आपको कैसे पता चला कि इनका जन्म हो गया है?'

उन्होंने बताया, 'मैंने सपने में एक खूब सुन्दर बगीचा देखा, जहाँ पेड़-पौधे असंख्य थे, पर फूल एक भी नहीं था। अचानक एक खूब सुन्दर फूल खिला, जिसकी सुगंध चारों ओर बिखरती जा रही थी। मैं समझ गया कि निरंजन का जन्म हो चुका है।'

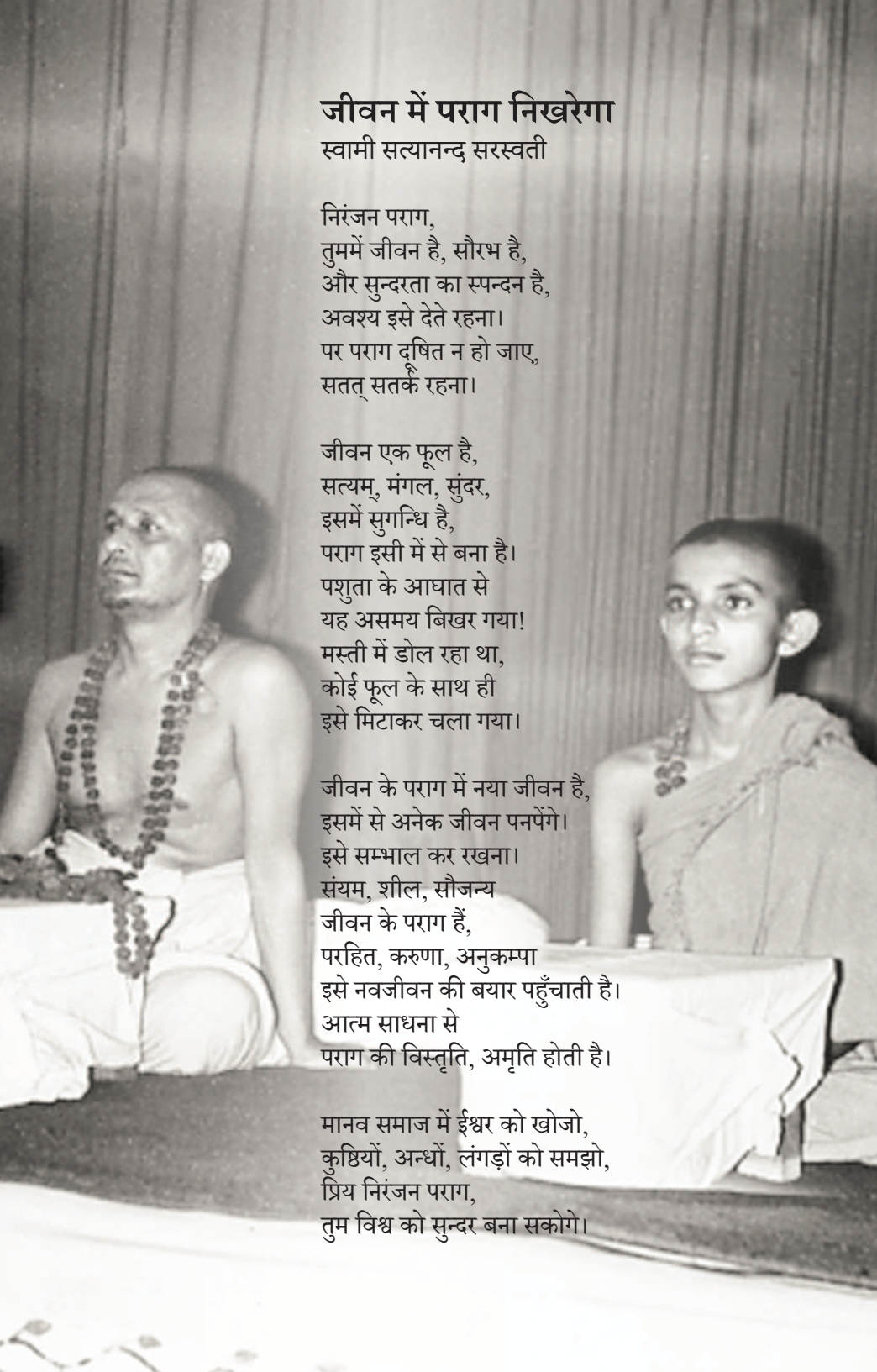

जीवन में पराग निखरेगा

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

निरंजन पराग,
तुममें जीवन है, सौरभ है,
और सुन्दरता का स्पन्दन है,
अवश्य इसे देते रहना।
पर पराग दूषित न हो जाए,
सतत् सतर्क रहना।

जीवन एक फूल है,
सत्यम्, मंगल, सुंदर,
इसमें सुगन्धि है,
पराग इसी में से बना है।
पशुता के आघात से
यह असमय बिखर गया!
मस्ती में डोल रहा था,
कोई फूल के साथ ही
इसे मिटाकर चला गया।

जीवन के पराग में नया जीवन है,
इसमें से अनेक जीवन पनपेंगे।
इसे सम्भाल कर रखना।
संयम, शील, सौजन्य
जीवन के पराग हैं,
परहित, करुणा, अनुकम्पा
इसे नवजीवन की बयार पहुँचाती है।
आत्म साधना से
पराग की विस्तृति, अमृति होती है।

मानव समाज में ईश्वर को खोजो,
कुष्ठियों, अन्धों, लंगड़ों को समझो,
प्रिय निरंजन पराग,
तुम विश्व को सुन्दर बना सकोगे।

आत्मसुधार यज्ञ

1960-69

यह मानव-जीवन परमात्मा का अमूल्य वरदान है। इसके दुरुपयोग से मनुष्य राक्षस बन कर विध्वंसकारी कार्यों से मानवता का शत्रु बन सकता है, और सदुपयोग से देवता बन कर मानवता का अनन्त कल्याण कर सकता है।

यह जीवन स्वयं में एक बहुत बड़ा प्रयोग है, जो परमात्मा की परम शक्ति – प्रकृति के निर्देशन में हो रहा है। पूरा विश्व ही इसके लिये एक सुन्दर प्रयोगशाला है। हमारी आध्यात्मिक चेतना विषयों के अंधकार में बहुत नीचे गिरी हुई है। हम दिव्य परमात्मा स्वरूप सच्चिदानन्द होकर भी अपने को भूल बैठे हैं। अविद्याग्रस्त होने के कारण हमने मोह की मदिरा पी ली है। नशे में अपनी सारी आध्यात्मिक विभूति गँवा बैठे हैं, फिर दीन-हीन-दु:खी होकर क्षणिक विषयों के पीछे पागल की भाँति घूम रहे हैं।

संसार के क्षण-भंगुर विषय मृगतृष्णा के जल की भाँति हैं, जिसके पान से मानव की अतृप्त आत्मा तृप्त नहीं हो सकती। आज इस भौतिकवाद के युग में भोग और तृष्णा की ज्वाला ने इतना विकराल रूप धारण कर लिया है कि सारी मानवता पूर्णत: अशान्त है। हममें सच्ची शांति नहीं, सुख नहीं, संतोष नहीं, केवल अशांति, दु:ख और भय का वातावरण छाया हुआ है। यह अविद्याग्रस्त मानव अज्ञान के कारण मृत्यु के गर्त की ओर बेतहाशा भागा जा रहा है, पर इसे स्वयं पता नहीं। मृत्यु के भय से ग्रस्त, अविद्या के भय से अन्धकार में भटकते हुए दु:खी मानव को सत्य का सही मार्ग कौन बतलायेगा? सच्ची शांति, सच्चा सुख कहाँ मिलेगा? वह कौन-सी जगह है, जहाँ पर जाने के बाद पूर्ण विश्रान्ति मिलती है, सारी अपूर्णताएँ समाप्त हो जाती हैं, सारी उलझनें संतोष और शांति में बदल जाती हैं?

वह जगह है परमात्मा के चरण। वह परमेश्वर कहीं दूर नहीं, बल्कि अपने ही अन्तस्तल की गहराइयों में छिपा है। वह है सत्य की परम ज्योति जिससे संसार के सारे विषय प्रकाशित होते हैं। वह है अनन्त शान्ति, शक्ति,

प्रेम, आनन्द और अमृत का समुद्र। मैं इस असत्यपूर्ण मायावी जीवन को उसी परम सत्य के चरणों में समर्पित करता हूँ, जो सबका आधार है। मेरे जीवन का हर क्षण और उसकी सारी चेष्टाएँ उसी परमात्मा के लिये होवें, इसका मैं प्रयास कर रहा हूँ। यही है मेरा आत्मसुधार यज्ञ।

वह सत्य मेरे लिये परम ज्योति का रूप है। उससे अनन्त ज्ञान और प्रकाश की किरणें प्रस्फुटित हो रही हैं। मुझे विश्वास है कि अविद्याग्रस्त, दु:खी मानव को सत्य के चरणों में शांति मिलेगी। ऊपर उठने की प्रेरणाशक्ति सत्य ही देता है। सूर्य की भाँति वह सबको जगाता है। हे अज्ञानान्धकार में भटकने वाले मानव! तू सत्य की शरण में जा, वहाँ तुझे ज्ञान का आलोक मिलेगा, शक्ति की प्राप्ति होगी। आनन्द और अमृत का सागर लहरायेगा। इसीलिये हम प्रार्थना करते हैं उस परम शक्ति से कि तुम मझे ले चलो – असत्य से सत्य की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर, मृत्यु से अमरत्व की ओर। सत्य, प्रकाश और अमृत का समन्वय करते हुए साधक सच्चिदानन्द योग की शरण लेता है।

योग हमारी माँ है। सारे विश्व में स्वामी सत्यानन्द जी के द्वारा दिव्य-चेतना संचरण हो रहा है। योग परमात्मा की एक दिव्य शक्ति है, जो दुनिया की अनेक विषमताओं से मनुष्य को छुड़ाती है। आज दुनिया की सब विषमताओं को हटाकर समता के द्वारा सुसंगठित करने का एकमात्र साधन योग है। योग सिर्फ आसन-प्राणायाम तक सीमित नहीं, बल्कि अनेक टूटे हुए हृदय-तारों को एक करके परमात्मा से प्रेमतत्त्व जोड़ता है। पूरे विश्व का कल्याण करना ही योग का ध्येय है। योग का प्रारम्भ आत्मा से होता है, जिसकी झलक पा लेने के बाद मानव कहने लगता है, *सत्यं शरणं गच्छामि।*

उस परम सत्य का मार्ग अत्यन्त दुर्गम है। सत्य के मार्ग पर चलना छुरे की धार पर चलने के समान अत्यन्त कठिन है, परन्तु बहादुरों के लिए दुनिया का कोई भी काम कठिन नहीं। नेपोलियन के अनुसार 'असम्भव' शब्द केवल मूर्खों के शब्दकोश में पाया जाता है।

सत्याग्रही बालक को योग की शरण में जाना पड़ेगा। स्वामी जी का ऐसा प्रताप है कि वे बच्चों में एक दिव्य शक्ति पैदा करके दु:खद मार्ग को भी सरल बना देते हैं। अपने प्रिय इष्ट से मिलकर एक होने की उत्कण्ठा का नाम ही प्रेम तत्त्व है। प्रेम तत्त्व और भक्ति योग, ये दिव्य आध्यात्मिक विषय हैं। साधक के हृदय में उस परम तत्त्व का उदय होने पर उसके जन्म-जन्मान्तर के कल्मष धुल जाते हैं।

हे मानव! आध्यात्मिक स्वतंत्रता पर तुम्हारा जन्मसिद्ध अधिकार है। अज्ञान का बन्धन काटो और मुक्ति का संदेश जलाओ। तुम्हारा असली स्वरूप आनन्द और अमृत है, दु:ख या दासता नहीं।

– मई 1969, मुंगेर

सत्यम् सुमनांजलि

गिरिवर के उत्तुंग शिखर पर
सुरसरि के पावन पथ पर।
शान्ति दूत अध्यात्म भूत
तेरे ही कारण गर्वित धरा महान्॥
तुमको प्रणाम हे ध्रुव ललाम।
हे सत्यम्! तुमको प्रणाम॥

तेरे पद रज भी पा जाऊँ
यदि तेरे अगण्य भक्तों की भी।
हे करुणामय तर जाऊँ
मिट जावे लालसा जी की॥
तुम अखिल धरा के गुरु महान्।
हे सत्यम्! तुमको प्रणाम॥

देव तुम परम सच्चिदानन्द
हम मृत्यु लोक के भार।
करो हे सत्यम् करतार
श्रद्धा के दो फूल स्वीकार॥
श्रद्धा-सिंचित संपृक्त हिये
अंजलि में दो अल्प प्रसून लिये
हे सत्यम्! तुमको प्रणाम॥

– जुलाई 1969, मुंगेर

1970-79

गुरु की आवश्यकता

गुरु पूर्णिमा के पावन एवं पवित्र दिवस पर नन्दग्राम के नवनिर्मित योग विद्यालय में, जिसकी जड़ बहुत पुरानी है, आप लोगों को महान् गुरु का साक्षात्कार होगा। गुरु-शिष्य महोत्सव, जिसे देवताओं ने भी मनाया, मानव भी मना रहे हैं।

भगवान श्रीराम, श्रीकृष्ण, श्री व्यासदेव, श्री शंकराचार्य, श्री स्वामी विश्वानन्दजी तथा स्वामी शिवानन्द जी के भी गुरु थे, और इन सबकी गुरु भक्ति परमोच्च कोटि की थी। तुलसीदास जी कहते हैं, 'बंदौं गुरु पद कंज, कृपा सिन्धु नर रूप हरि', आगे कहते हैं, 'गुरु बिन ज्ञान नहिं जग माहिं।' यह संदेश हमें जीवन-पथ पर सच्चा प्रकाश दिखा रहा है। उपनिषद् कहते हैं, 'दुर्लभा सहजावस्था सद्गुरोर्करुणां विना।' तात्पर्य यह है कि गुरुकृपा के बिना परमावस्था की प्राप्ति भी असंभव है। इसी महत्त्वपूर्ण संवाद का आदेश हमें गीता दे रही है।

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिन:॥4.34॥

ज्ञानी तथा तत्त्वदर्शी गुरुदेव हमें ज्ञान प्रदान करेंगे। इसी बात की गूंज योग वाशिष्ठ का संदेश है, 'वास्तविक ज्ञानेच्छुक को गुरु-वाक्य आत्म-दर्शन के योग्य बनायेंगे।' गुरु-वाक्य शिष्य के हृदय में ज्ञान-ज्योति प्रज्वलित करेंगे। बिना गुरु के ज्ञानावस्था में पहुँचना बड़ा दुष्कर है। गुरुकृपा द्वारा परिपूर्ण ब्रह्म का साक्षात्कार किया जा सकता है। गुरु ही मार्ग की बाधाओं का निराकरण करते हैं। गुरु अविद्या के आवरण को हटा देते हैं।

गुरु के समीप जाने के पहले आप में ये गुण होने चाहिये—गुरु भक्ति, निष्काम कर्म, यम, नियम, अभ्यास, उपासना तथा योग, मानसिक सत्य एवं मानसिक ब्रह्मचर्य का अभ्यास। जीव भावना से स्वतंत्र रहिये, तब गुरु महावाक्यों का उपदेश देंगे, आपको अपरोक्ष ज्ञान देंगे। आपके मार्ग की बाधाओं और संदेहों का निराकरण करेंगे। किन्तु हृदय से आपको सच्चा अभ्यास तथा परिश्रम करना पड़ेगा। दिव्य दृष्टि द्वारा, ज्ञान चक्षु द्वारा आपको सत्-चित्-आनन्द की दशा का अनुभव करना होगा। शास्त्रों में श्रवण, मनन, निदिध्यासन की आज्ञा है, यही युगों का संदेश है, यही गीता और रामायण का संदेश है, यही ऋषि-मुनियों का संदेश है जो गुरु-शिष्य परम्परा से चला आ रहा है। ये शब्द भी मेरे नहीं, मेरे गुरु के हैं। मेरे गुरु के भी नहीं, उनके गुरु के हैं, यह संदेश हमारी वंश परम्परा से चला आ रहा है।

स्वामी शिवानन्द जी कहते हैं, 'मेहंदी के पत्ते हरे होते हैं, उन्हें तोड़कर पत्थर पर पीसा जाता है, फिर वह नववधू के हाथों में लगाया जाता है। सुन्दर रंग देता

है यह, पर यह रंग आया कहाँ से? मेहंदी जब तक पत्थर की शिला पर पीसा न जाय तब तक वह रंग नहीं दे सकती, यद्यपि रंग उसके अन्दर होता है। बीज जब तक अपने को मिट्टी में नहीं मिला देता तब तक फूल नहीं बनता, यद्यपि फूल बीज में ही होता है। दिया जब तक जलता नहीं, प्रकाश नहीं दे सकता, यद्यपि प्रकाश उसमें ही होता है। ओ मानव! सब कुछ तेरे में ही है, पर उसे तू पहचान नहीं पा रहा है। मेहंदी को पीसने वाले की, बीज को माली की और दिये को ज्वाला की आवश्यकता है। हे मानव! तुझे भी एक गुरु की आवश्यकता है, जिसके चरण कमलों में बैठकर तू ज्ञान ज्योति प्राप्त करके अपने आप को और संसार को प्रकाशित कर सके।'

बड़े भाग्य से सद्गुरु का प्रादुर्भाव होता है, और वही सौभाग्य मेरे पूज्य व प्रिय बन्धुओं, नन्दग्राम निवासियों को प्राप्त हो रहा है। प्रभु व गुरु का आशीष सभी को प्राप्त हो।

– जुलाई 1971, बेल्फास्ट

मेरी यौगिक संस्कृति

एक स्वर्णिम दिवस।
अगरू धूम की श्याम लहरियों से,
घिरा होगा मेरे देश का आश्रम!
नत होंगे शत-शत जन,
गुरु! तुम्हारे चरणों में!
सबके साथ मुझे भी अभय दान देना।
हे सत्यम्, मेरे सत्य का पथ प्रदर्शित करना।
मेरे देह के दोने में,
विवेक, वैराग्य, निवृत्ति, संयम एवं संकल्प
का पंचामृत भर देना।
मेरे अवगुणों की उस यज्ञ में आहुति देना।
मैं एकाकार हूँ,
तुमसे विलग होकर भी।
सुदूर ... राजतंत्र के प्रतीक इस देश में,
सम्पन्नता के बीच
भावनाओं की विपन्नता है।
ऊँची उठती मीनारें, कम्प्यूटर्स,
धुँआ उगलते कल-कारखाने –
यहाँ मानव का भी यंत्रीकरण हो चुका है।
जन-मन के बीच
खूँटे गड़े हैं – व्यक्तिवादिता के,
जो आपस में एक नहीं होने देते।
चतुर्दिक बिखेरते,
श्वेत बर्फ के नन्हें कण –
सूरज की रोशनी में चमचमाता लंदन!
लेकिन कितना कुहासा है,
चारों ओर छाया हुआ अंधेरा।
दुधमुहे बच्चे यूनीफार्म में
बमों की बात करते हैं!
'टीनएजर्स' दिग्भ्रमित हैं!
भौतिक सुख ने उनकी आत्मा को
पंगु बना दिया है।
लाठी टेकते हुये बूढ़े,
इतिहास के साक्षी हैं।
उन्होंने मेरे देश को तड़पते हुये देखा था
गुलामी की यंत्रणा से।
यहाँ टैब्लेट का युग है!
मां लोरी नहीं सुनाती,
पिता कहानी नहीं बताते।
बच्चे नींद की टैब्लेट खाकर सो जाते है!
मैं इस विज्ञान के देश में ज्ञान यज्ञ करूँगा!
हविष्य बनेंगे,
बच्चों के चेहरे पर लगे प्रौढ़ता के नकाब,
'टीनएजर्स' के अधकचरे संस्कार,
बूढ़ों के मिथ्या अहंकार।
यंत्रीकृत मानव
मेरी ॐ की ध्वनि से थम जायेगा।
मैं उन्हें प्रीति के जन्म एवं
अंधकार के मरण से मिलाऊँगा।
मेरी संकल्पित प्रजा के क्षितिज को
और विशाल बना दो।
मेरी फैली हुई भुजाओं को असीम बना दो।
आकाश की तरह,
जहाँ सूर्योदय ग्रहणमुक्त हो।
भिन्न-भिन्न व्याधियों के टैब्लेट,
सैकरिन, एमायल नाइट्रस, एफेड्रीन टेब्लेट,
अब इन्हें जीवन के कगार पर नहीं ले जायेगी।
मैं उन्हें खींच लाऊँगा।
मेरी यौगिक संस्कृति
अब एक नये जीवन का पाथेय बनेगी,
उनकी वेदनाओं का अंत करेगी,
और मेरे प्रभाती की मंगल ध्वनि से
उनके शुभ दिनों की शुरुआत होगी।

– 1972, लंदन

मनोनियंत्रण का साधन – योग

आज आप लोगों से मिलकर, आप लोगों को योग की जानकारी के लिए उत्सुक देखकर मुझे बहुत खुशी हो रही है। योग विद्या हमारी प्राचीन संस्कृति है, लेकिन ऋषि-मुनियों को छोड़कर आज तक इस विद्या को कोई भी समझ नहीं पाया है। सब यही समझते हैं कि योग तो साधु-महात्मा लोगों के लिए है, घर से दूर जंगल में रहने वालों के लिए है, गृहस्थों के लिए नहीं है। कुछ लोग कहते हैं, साधु बाबा काला जादू जानते हैं, बाबा जी से दूर ही रहना नहीं तो जादू-टोना कर देंगे, या साधु बाबा पद्मासन लगाकर बैठते हैं और हवा में उड़ जाते हैं। ऐसी अनेक गलत धारणाओं के कारण मनुष्य अभी तक योग को अपने जीवन में नहीं ला सका है।

आज मैं आप लोगों को योग के बारे में दो-चार शब्द कहूँगा। योग की अलग-अलग शाखाएँ होती हैं, जैसे कर्म योग, भक्ति योग, ध्यान योग, लय योग, हठ योग, आदि। उदाहरण के तौर पर हम हठ योग को ही लें। हठ योग में आसन, प्राणायाम और षट्कर्म है, जिसका उल्लेख घेरण्ड संहिता में आया है। षट्कर्म के अलावा हठ योग में बहुत-सी क्रियायें आती हैं, जिनसे मनुष्य सोचते हैं कि मन पर विजय पा सकते हैं। लेकिन मन पर विजय पाना बायें हाथ का खेल नहीं। वर्षों लग जायेंगे, या जिन्दगी ही बीत जाएगी। मन पर विजय पाने के लिए पहले मन का दोस्त बनना पड़ेगा, तब कहीं मन आपका दास बन सकता है। इस विषय में एक सुन्दर कहानी याद आ रही है, जिसे पूज्य गुरुदेव बताते हैं –

एक राजा के पास जंगली घोड़ा था। वह बहुत ही दुष्ट था, सभी नौकर उससे परेशान थे। राजा ने एलान करवाया कि जो इस घोड़े को रास्ते पर लायेगा उसे बहुत-सा इनाम और जागीर दी जायेगी। कितने ही लोग आये और घोड़े के पास जाकर अपना हाथ-पैर तुड़वा लिए। सभी परेशान। एक दिन एक साधारण-से आदमी ने आकर कहा कि वह घोड़े को सुधार सकता है। किसी को विश्वास नहीं हुआ। घोड़ा छोड़ा गया, घोड़ा भागा। युवक ने रोकने या पकड़ने की कोशिश नहीं की, और वह भी घोड़े के पीछे भागा। दिन, हफ्ते, महीने और वर्ष बीत गए। सबने सोचा कि वह युवक अब तक आया नहीं, शायद मर गया हो।

12 वर्ष के बाद एक दिन वही युवक घोड़े पर सवार होकर आया। लोगों ने पहचाना, आश्चर्य हुआ। सबने पूछा, 'भाई, तुमने इस दुष्ट घोड़े पर कैसे सफलता पाई?' उसने बताया, 'जब मैं घोड़े के पीछे भागा तो दूर से देखता रहा कि यह कहाँ जाता है, क्या करता है? जब यह खाता-पीता-सोता, तो मैं भी कुछ खा-पी लेता और कुछ दूरी पर ही सो जाता। कभी उसके पास नहीं गया, दूर से बराबर ध्यान रखता। काफी समय बाद कभी-कभी यह मेरी तरफ देखता, कभी खड़ा हो जाता।

मुझे उसमें कुछ परिवर्तन दिखा तो मैंने उसे घास दिखाई। वह आकर मेरे हाथ से खाने लगा। दोस्ती होने लगी पर मैं दूर ही रहता। घोड़ा धीरे-धीरे मेरे नजदीक आने लगा। मैं सहलाने लगा, छूने लगा, और एक दिन उस पर सवारी भी की, और जब वह पूरी तरह मेरे वश में हो गया, तब यहाँ आया हूँ।'

मन को भी इसी बिगड़े घोड़े की तरह समझिए। इसे वश में करना एक समस्या ही है, पर उस समस्या का इलाज भी हमारे पास है। इस मन रूपी घोड़े को काबू में लाने के लिए योगाभ्यास ही प्रथम सीढ़ी है। कितने लोग कितनी ही बातें करते हैं। किसी ने तो कह दिया, मन दु:खों का पिटारा है जो भगवान से हमें दूर कर देता है। मैं ज्यादा तो नहीं जानता, लेकिन सोचता हूँ कि यह मन हमारे और भगवान के बीच में एक परदा है। हमें क्या करना है? केवल इस परदे को, इस मन को सामने से हटाकर भगवान से मिलना है, और यह योगाभ्यास के द्वारा ही सम्भव हो सकता है।

आप लोगों को मालूम ही है कि योग का मतलब है मिलना, जिसे अँग्रेजी में यूनियन कहते हैं – शिव-शक्ति का मिलना या अपनी चेतना का परमात्मा से मिलना। हमलोग हठ योग में जो बतलाते हैं वह व्यायाम या कसरत नहीं है, न जोकर का खेल है। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि योग का प्रयोजन है अपने मन को वश में करना, मन पर शासन करना। यह योगाभ्यास से ही सम्भव है।

– फरवरी 1974, जगदलपुर योग सम्मेलन

शक्ति की खोज में

योग और इसके सभी अंग तंत्रशास्त्र की शाखायें हैं। प्राचीन काल से ही तंत्र एक गुप्त विद्या के रूप में प्रचलित है। ऋषियों ने तंत्र की कुछ शाखाओं को जनसामान्योपयोगी बनाने के लिए खुले वातावरण में पुनर्मूल्यांकन किया। इनका उद्देश्य तन्त्र को सर्वव्यापक करना था। उसी समय कुण्डलिनी योग का उद्घाटन हुआ। यह योग तंत्र का एक भाग है, न तो यह असत्य है और न रहस्यात्मक। मनुष्य का अन्तर्मन सदैव विकास की सीढ़ियों पर चढ़ता रहता है। प्रत्येक मानव में शक्ति का अनन्त खजाना भरा है और इसको प्रकाश में लाना ही कुण्डलिनी योग का प्रयोजन है।

कुण्डलिनी के विषय में लोगों की बहुत-सी भ्रमपूर्ण धारणायें हैं और कुण्डलिनी की परिभाषा भी ठीक से नहीं दी जाती। अनेक पीढ़ियों तक मनुष्य को अपने शरीर का ज्ञान नहीं था। धीरे-धीरे पता चला कि उसका एक हृदय है, दो फुफ्फुस हैं, इत्यादि। कुण्डलिनी की खोज अब अगला कदम है। कुण्डलिनी दैविक शक्ति है, सृष्टि का तत्त्व रूप है। इस शक्ति को जगाया जा सकता है और इसको जगाने की अनेक विधियाँ हैं। यदि हम आधुनिक मनोविज्ञान में कुण्डलिनी के पर्यायवाची शब्द खोजें तो पाते हैं कि कुण्डलिनी का अचेतन मन से निकट का सम्बन्ध है। विभिन्न देशों और संस्कृतियों के अवलोकन से पता चलता है कि सर्प कुण्डलिनी को दर्शाने का सामान्य तरीका है। हिन्दू इसे शक्ति या देवी कहते हैं, अफ्रीका में इसे नऊँम, चीन में ची-शक्ति और जापान में की-शक्ति कहते हैं। ईसाई धर्म में भी सन्त तेरेसा कुण्डलिनी शक्ति के अनुभव के विषय में लिख चुकी हैं। सूफी मत और हिन्दू मत में भी इसका अनेकों लोगों ने अनुभव किया है।

उत्थान के समय कुण्डलिनी अनेक मार्गों का अनुसरण कर सकती है। प्राचीन योगीजन कहते हैं कि कुण्डलिनी मूलाधार चक्र में जगकर दूसरे चक्रों को भेदती हुई सीधे सहस्रार तक पहुँचती है। परमहंस स्वामी सत्यानन्द जी के अनुसार कुण्डलिनी शक्ति शरीर के किसी भी चक्र से उठ सकती है, मूलाधार से ही जाग्रत हो यह कोई आवश्यक नहीं है। मनुष्य शरीर के रीढ़ की हड्डी में छ: मुख्य चक्रों के अस्तित्व की मान्यता है – मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि और आज्ञा। सहस्रार सभी चक्रों का नियन्त्रक चक्र है। शरीर में और भी अन्य चक्र हैं, उदाहरणार्थ बिन्दु, ललना, नासिकाग्र, भ्रूमध्य इत्यादि। लेकिन ये सब चक्र छ: प्रमुख चक्रों के अधीन काम करते हैं। प्रथम चक्र मूलाधार है जो कुण्डलिनी का निवास स्थान है। इसका तत्त्व पृथ्वी है। दूसरा चक्र स्वाधिष्ठान है जो मूलाधार से दो अंगुल ऊपर है और इसका तत्त्व जल है। तीसरा चक्र है मणिपुर। यह रीढ़ की हड्डी में नाभी के पीछे स्थित है और इसका तत्त्व अग्नि है। चौथा चक्र अनाहत, हृदय के पीछे

रीढ़ की हड्डी में स्थित है। अनाहत का अर्थ है बिना कम्पन से उत्पन्न ध्वनि और इसका तत्त्व आकाश है। छठवाँ चक्र आज्ञा, पीनियल ग्रन्थि पर स्थित है जहाँ पर सब तत्त्वों का मिलन होता है। इसे गुरु-चक्र भी कहा जाता है। अन्त में सहस्रार है जहाँ पर कुण्डलिनी का शिव से मिलन होता है।

तंत्र शास्त्र के मतानुसार इन सब चक्रों में असीमित शक्ति छिपी हुई है। इन चक्रों से शक्ति नि:सृत नहीं हो पा रही है। चक्रों में निहित शक्तियों के सुप्त रहने के कारण इन चक्रों में अशुद्धि विद्यमान है और चक्रों को कुण्डलिनी के गुजरने के पूर्व शुद्ध होना आवश्यक है। अशुद्धि के कारण कुण्डलिनी के चक्रों से गुजरने से पूर्व बहुत दर्द का अनुभव होता है। उस समय ऐसा लगता है मानो कोई शरीर को दो भागों

में विभक्त कर रहा है। उदाहरणार्थ आप सात कमरों के दरवाजे तोड़ना चाहते हैं। इसके लिये आपको शारीरिक बल लगाने की आवश्यकता है। एक बार दरवाजा खुल जाय तो आप बहुत ही प्रसन्न हो जावेंगे, भले ही आप थके हों। उसी तरह बहुत अधिक दर्द होने के बाद जैसे ही कुण्डलिनी चक्रों को पार करती है वैसे ही आनन्द की अनुभूति होने लगती है।

योग-तरी-तीरे-तीरे में स्वामी सत्यानन्द जी कहते हैं, 'ये आध्यात्मिक केन्द्र या चक्र अनेक रहस्यों को अपने में छिपाये हुए हैं। ये सामान्य अवस्था में निष्क्रिय पड़े हैं। आध्यात्मिक जिज्ञासु इस असीम शक्ति के भंडार का उद्घाटन करना चाहता है। यही शक्ति रीढ़ की हड्डी के नीचे सर्पाकार कुण्डली मारे बैठी है। इस असीम शक्ति-भंडार को एक-एक चक्र से गुजरना होता है। जैसे एक बिजली का मिस्त्री बल्ब को विद्युत् धारा वाले तारों से जोड़कर बल्ब प्रज्वलित कर देता है, उसी तरह आध्यात्मिक साधक जगाई गई कुण्डलिनी शक्ति को चक्रों से जोड़कर ज्ञान का प्रकाश उपलब्ध कर लेता है। तब साधक अपनी शक्तियों का अनुभव करने लग जाता है।'

इसपर अनेक अनुसंधान भी हुए हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में डॉक्टर ली सेनेला ने कुण्डलिनी शक्ति पर अनेक प्रयोग किये हैं और अपनी किताब 'कुण्डलिनी– साइकोसिस ऑर ट्रान्सैन्डैन्स' में कुण्डलिनी के जागरण की विभिन्न विधियों का उल्लेख किया है। स्वामी सत्यानन्दजी कहते हैं, 'प्रत्येक चक्र से हजारों नाड़ियाँ व तन्तु शरीर के अन्य अंगों को जाते हैं और शरीर की विभिन्न चेतनावस्थाओं का नियंत्रण करते हैं। चक्र उस बिजली के खम्भे की तरह हैं जहाँ से तारों का जाल विभिन्न स्थानों में जाता है। चक्रों में ऊर्जा संप्रेषण, क्रिया-प्रतिक्रिया और ऊर्जा स्थानान्तरण होता रहता है। यदि आप मणिपुर चक्र को ध्यान द्वारा जगाने का प्रयास कर रहे हों तो इससे शरीरगत प्रतिक्रिया, नाड़ी संस्थान में प्रतिक्रिया अथवा अन्त:शारीरिक प्रतिक्रिया संभव है।'

कुण्डलिनी के जागरण में हम एक विशिष्ट ग्रन्थि या अंग के माध्यम से चेतना स्तर में परिवर्तन लाने की कोशिश करते हैं। चक्र का जागरण सूक्ष्म रूप से होता है, स्थूल रूप से नहीं। चक्र के स्थूल रूप का विश्लेषण कर सूक्ष्म रूप का विभाजन करना ही जागरण है। चक्र को जगाने से ही कुण्डलिनी का जागरण होता है।

कुण्डलिनी जागरण में मस्तिष्क के कम्पन की दर सामान्य से दस गुना अधिक हो जाती है। मस्तिष्क की क्रियाशीलता बढ़ जाती है। जिनकी कुण्डलिनी जगी हो वे बहुत क्रियाशील होते हैं। एल.एस.डी. जैसी नशीली वस्तुओं का सेवन करने वाले भी अद्भुत अनुभव प्राप्त करते हैं, किन्तु यह कुण्डलिनी जागरण नहीं है। कुण्डलिनी जागरण एक मनोकायिक प्रक्रिया है जिसकी अनेक विधियों का वर्णन उपलब्ध है। सबसे अच्छा तरीका यही है कि सिद्ध गुरु के निर्देशन में इसका अभ्यास किया जाए।

– अक्टूबर 1977, मुंगेर

नया कर्णधार

जनवरी 1983 में स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती के बिहार योग विद्यालय की अध्यक्षता ग्रहण करने पर स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती के उद्गार

बिहार योग विद्यालय के इतिहास में 1983 का साल एक नये आयाम और एक नई दिशा की सूचना देता है। किसी भी संस्था का निर्माण अपने में एक महान् कार्य है, पर उसके उच्च आदर्शों और मर्यादाओं को सुरक्षित बनाये रखने के लिए एक सुयोग्य उत्तराधिकारी का चुनाव कर लेना कम महत्त्वपूर्ण कार्य नहीं है। संस्था के प्रारम्भ से ही स्वामी सत्यानन्द जी को गुरु और प्रबंधक की दोहरी भूमिकाएँ निभाते हुए अनेक परेशानियों का सामना भी करना पड़ा है, किन्तु अद्वितीय बुद्धिमत्ता के कारण ही उनकी सफलता सम्भव हो सकी है। जीवन-मुक्त संत ही ऐसी भूमिका आसानी से निभा सकते हैं। स्वामी सत्यानन्द जी ऐसे ही व्यक्तित्व के प्रतीक हैं, जिनका प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष मार्गदर्शन लोगों के जीवन को सतत् आलोकित करता रहा है।

श्री स्वामीजी कहते हैं, 'किसी भी संस्था के संस्थापक के लिए यह सर्वथा आवश्यक है कि वह अपने जीवन काल में ही अपने स्थान को रिक्त कर अपने उत्तराधिकारी को वहाँ प्रतिष्ठित कर दे ताकि उत्तराधिकार ग्रहण करने वाला व्यक्ति अपने कार्यों में दक्षता प्राप्त करने में समर्थ हो जाए।' यह संन्यास संस्था के लिए विशेषत: युक्तिसंगत है, क्योंकि यहाँ वास्तव में किसी व्यक्ति का कुछ भी नहीं होता।

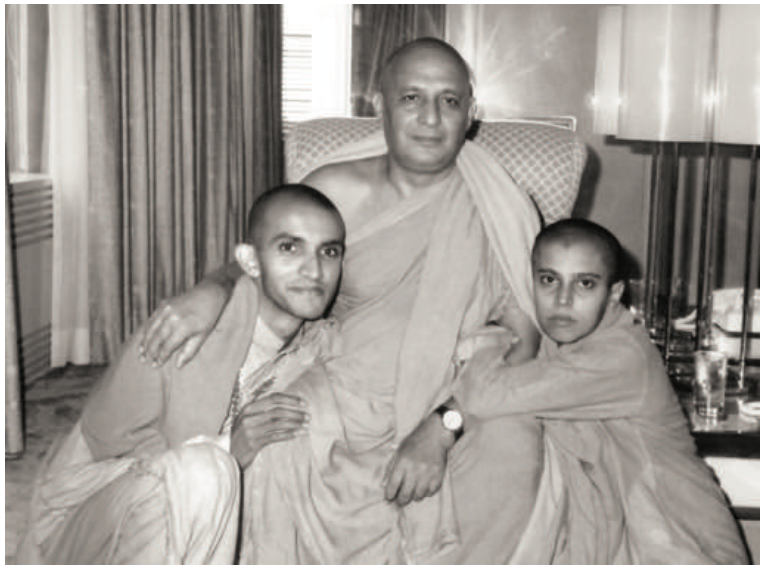

अनेक महात्माओं को देखा है, जो अपने जीवन काल में बड़े ही क्रियाशील रहे हैं, किन्तु अपने पीछे एक समर्थ शक्ति-स्तंभ को छोड़ जाने में असमर्थ ही रहे।

श्री स्वामीजी के योग मिशन के प्रशासन के लिए अब स्वामी निरंजन 'बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स' के प्रधान हैं, वे ही मिशन की सभी गतिविधियों का प्रत्यक्ष रूप से संचालन करेंगे, आंदोलन के कर्णधार बनेंगे। एक शिष्य के लिये अपने गुरु के निर्देशों को मानना सबसे महत्त्व की चीज है। उसे अपने गुरु की आवश्यकताओं का पूर्वाभास होना चाहिए तथा सतत् सावधान रहना चाहिए, तभी गुरु अपना ज्ञान शिष्य में सम्प्रेषित कर सकेंगे। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि स्वामी निरंजन ऐसे समर्पित शिष्य की तरह कर्तव्यपरायणता के उच्च आदर्शों की रक्षा करते रहे हैं। यद्यपि उनकी अवस्था अभी केवल 23 वर्ष की है, परन्तु उनके अनुभव, निर्णय क्षमता एवं विवेक की तुलना दुगनी आयु वाले व्यक्ति से ही की जा सकती है। वे 10 वर्ष की अवस्था से ही व्यापक रूप से विश्व-भ्रमण कर रहे हैं। शायद तब उन्हें इसकी जानकारी भी नहीं थी कि भविष्य में बहुत बड़ा उत्तरदायित्व उन पर पड़ने वाला है। उनके असाधारण कार्यों और सफलताओं पर दृष्टिपात करने से ऐसा जान पड़ता है कि विशाल उत्तरदायित्व का भार यद्यपि एक नवयुवक के जिम्मे है, किन्तु यह हिमालय-सा विशाल भार सुदृढ़ कंधों और परिपक्व व्यक्तित्व पर टिका है।

मेरा ही स्वरूप

बिहार योग विद्यालय की अध्यक्षता स्वामी निरंजनानन्द को सौंपने के बाद भी श्री स्वामी सत्यानन्द जी को देश-विदेश से निरंतर भ्रमण के लिए निमंत्रण प्राप्त हो रहे थे। सन् 1985 में उन्होंने सभी के लिए अपना यह संदेश प्रसारित किया –

मुझे समय-समय पर अपने शिष्यों से अनेक आमंत्रण पत्र प्राप्त होते रहते हैं तथा यहाँ आने वाले दर्शनार्थी एवं प्रशिक्षणार्थीगण भी भ्रमण का अनुरोध करते हैं। मैं निश्चित रूप से आता, क्योंकि मेरा अपने शिष्यों के साथ अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है, परन्तु यह अभी संभव नहीं है।

फिर भी सबकी इच्छा को ध्यान में रखते हुए मैंने अपनी ओर से स्वामी निरंजन को भेजने का निर्णय लिया है। यद्यपि मैं व्यक्तिगत रूप से वहाँ उपस्थित नहीं रहूँगा, परन्तु स्वामी निरंजन में मेरी आत्मा, मेरा हृदय और मन वहाँ उपस्थित रहेंगे।

इसलिए सभी संन्यासियों, शिष्यों, भक्तों तथा मित्रों को स्वामी निरंजन के भ्रमण की सूचना दो। वे उन्हें मेरे एक प्रतिनिधि के रूप में ही नहीं, बल्कि बिना किसी अन्तर के मेरे ही स्वरूप में पायेंगे। मैं आशा करता हूँ कि मेरा संदेश स्पष्ट है।

आत्मा की निर्मलता

आत्मसंयम के सोपानों को पार कर
ईश्वरोन्माद की सरिता के तट पर आकर
जहाँ सत्य का जल सतत् प्रवाहमान है
जिस पर करुणा की लहरें थिरक रही हैं
वहाँ स्वयं को पूर्णतया अनावृत कर दो,
और उस पावन प्रवाह में गहरा गोता लगाओ
तभी, केवल तभी
इस मायामय जगत् के मल से
तुम्हारी आत्मा निर्मल हो सकेगी।

– 1986, मुंगेर

चिदाकाश का सिद्धांत

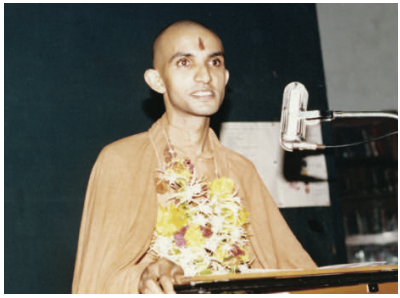

चिदाकाश का शाब्दिक अर्थ होता है चित्त या मन का आकाश। हम जब अपनी आँखों को बन्द करते हैं, तब बन्द आँखों के सामने जो काले रंग का अनंत विस्तार दिखायी देता है, उसे चिदाकाश माना जाता है। योग के अनुसार प्रत्येक मानसिक क्रिया चिदाकाश में घटित होती है, क्योंकि योग में हम यह मानते हैं कि प्रत्येक विचार, अनुभव, भावना एवं मानसिक क्रिया का एक विशेष रूप, रंग और आकृति होती है अर्थात् उसके साथ विशेष गुण सम्बद्ध रहते हैं। हम विचारों को भले ही न देख पायें, क्योंकि उनकी आवृत्ति भिन्न होती है, लेकिन उस विचार के संगत रूप, रंग और आकार को चिदाकाश में देखना सम्भव है।

जब आप सोचते हैं तो किस प्रकार सोचते हैं? क्या विचार मन में एक वाक्य के रूप में उभरता है, या आप ऐसे विचार करते हैं, मानो कोई आपसे मानसिक रूप से वार्तालाप कर रहा हो? या आप किसी चीज का मानस-दर्शन करते और अपने विचारों को उस पर आरोपित कर देते हैं? उदाहरण के लिए, आप जानते हैं कि पर्वत सुन्दर होते हैं। क्या आप पर्वतों को वास्तव में अन्दर देखते हैं, और तब यह विचार आता है, 'ये सुन्दर हैं?' आपके भीतर चलने वाली विचार प्रक्रिया आखिर क्या है?

प्रत्येक व्यक्ति अलग प्रकार से सोचता है। कुछ लोग ऐसे सोचते हैं, जैसे कोई उनके मस्तिष्क के भीतर उनसे बात कर रहा हो। अन्य लोग सोचते हैं जैसे कोई कुछ लिख रहा हो, और वे उन लिखे हुए शब्दों को देख रहे हों। कुछ लोगों को विचार दृश्य रूप में दिखते हैं। हम सब समय-समय पर इन भिन्न-भिन्न प्रक्रियाओं से गुजरते हैं, किन्तु व्यक्ति के विचार की सामान्य शैली प्राय: एक-सी रहती है, यह बदलती नहीं है। हम इसे मस्तिष्क के दायें एवं बायें गोलार्द्ध की क्रियाशीलता का प्रतीक मान सकते हैं। कलाकार एक विशेष प्रकार से सोचते हैं और बुद्धिजीवी दूसरे प्रकार से। विचार का रूप ऊर्जा का होता है और ऊर्जा नित्य परिवर्तनशील एवं गतिमान है। वह नित नये रूप, रंग और आकार ग्रहण करती रहती है। हर प्रकार की मानसिक क्रिया स्वयं को बाह्य जगत् में एक रंग या आकार या प्रतीक या किसी अन्य दृश्य अनुभव के रूप में प्रकट करती है। संक्षेप में कहा जाए तो मन:शक्ति के दृश्य पक्ष का अनुभव हम जिस आयाम में करते हैं, वह चिदाकाश कहलाता है।

– 1987, मुंगेर

योग की भावी रूपरेखा

हम यहाँ अपने गुरु, परमहंस सत्यानन्द सरस्वती के त्याग की स्वर्ण जयंती की पावन संध्या पर एकत्र हुए हैं। इस योगमय परिवेश में हमें विश्व के बत्तीस देशों से आए छ: सौ प्रतिनिधियों तथा भारत के बीस राज्यों से आए छ: हजार प्रतिनिधियों के स्वागत का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है।

योग की शुरुआत कब होती है, इसका समापन कहाँ होता है, और योग क्या है, इसे समझ लेना आवश्यक है। योग का उद्गम कालान्तर में कहीं खो गया है, हम केवल यह अनुमान लगा सकते हैं कि इसका उद्भव तब हुआ होगा जब इस पृथ्वी पर विचरण करते प्रथम मानव ने अपने चारों ओर देखकर स्वयं से प्रश्न किया होगा, 'यह सब क्या है? मैं कौन हूँ? मेरे शरीर के क्रिया-कलाप किस प्रकार होते हैं? मैं सुरक्षा, सुख और भोजन की खोज में प्रवृत्त कैसे हुआ? मुझसे परे कोई महान् सत्ता अवश्य है, जिसने सूर्य, चाँद और तारों का सृजन किया है।' उसी क्षण मानव के अंदर योग के बीज बोए गए, और वह बीज आज हम सब लोगों को पृथ्वी पर विचरण करने वाले उस प्रथम मानव से संस्कार के रूप में, विरासत में प्राप्त हुआ है। इस प्रक्रिया में हम जीवन में अनेक परिवर्तनों से गुजरे हैं, ऐसे परिवर्तन जिन्होंने व्यक्ति को आत्मानुसंधान के लिए, ब्रह्माण्ड के बारे में नवीन तथ्यों की खोज के लिए, और अखिल विश्व के साथ अपने संबंधों के नए आयामों की खोज के लिए प्रेरित किया। यही योग का आरम्भ था।

योग मानव जीवन से पृथक् नहीं है, यह मानव जीवन का अभिन्न अंग है। यह सहज-स्वाभाविक क्रमिक विकास की प्रक्रिया है, किन्तु जैसे-जैसे हम इस भौतिक संसार में, इन्द्रिय व्यापार में, मनस्, बुद्धि, चित्त और अहंकार के संसार में अधिक लिप्त होते जाते हैं, हमें उन दु:खों को झेलना पड़ता है, जो इस पदार्थमय जगत् द्वारा हम पर थोप दिए जाते हैं। ये कष्ट हमारे शरीर में असंतुलन के रूप में, व्याधि के रूप में प्रकट होते हैं। व्याधि चाहे शारीरिक हो या मानसिक, भावनात्मक अथवा आध्यात्मिक, और कुछ नहीं मात्र असामंजस्य की एक अवस्था है मानव की शारीरिक और मानसिक संरचना में। और इस व्याधि का निर्मूलन आवश्यक है।

यह कैसे किया जाए? व्याधि का निर्मूलन करके व्यक्तित्व में पुन: पूर्ण सामंजस्य स्थापित करने और एक संतुलित-समन्वित व्यक्तित्व का विकास करने के लिए एकमात्र उपाय है आत्मावलोकन एवं आत्मशुद्धि की एक प्रक्रिया को अपनाना। एक ऐसी विधि जो शारीरिक एवं मानसिक संरचना तथा आध्यात्मिक आकांक्षाओं को पुन: संतुलित और समंजित कर दे। इस हेतु राज योग, कर्म योग, भक्ति योग तथा अन्य अनेक योगों का विकास हमारे दूरद्रष्टा मनीषियों द्वारा किया गया, जो

यह जानते थे कि भावी पीढ़ी को जटिल समस्याओं का सामना करना पड़ेगा। योग की यही परम्परा भारतीय संस्कृति के एक अभिन्न अंग के रूप में सुरक्षित रही है।

अपनी संकीर्ण मानसिकता के कारण हम योग को मात्र एक शारीरिक प्रक्रिया मान लेते हैं, पर ऐसा नहीं है। योग का उद्गम तंत्र से हुआ है, और तंत्र शब्द की व्युत्पत्ति दो शब्दों से हुई है – तनोति और त्रायति। तनोति का अर्थ होता है विस्तार करना और त्रायति का अर्थ होता है स्वतंत्र करना। किसका विस्तार करना और किसे स्वतंत्र करना? चेतना का विस्तार और शक्ति का उत्थान। अन्तर्निहित शक्ति को स्वतंत्र करना तंत्र और योग का उद्देश्य है। मैं पुन: कहता हूँ, यह चेतना के विस्तार की प्रक्रिया है, यह जीवन के प्रति एक बृहत् और समग्र दृष्टिकोण को विकसित करने तथा मानव व्यक्तित्व की सुप्त शक्तियों को जाग्रत करने की प्रक्रिया है, जो तंत्र और योग का निहितार्थ है।

हमारा संपूर्ण जीवन ही योग है, इस विचारधारा को विकसित करना होगा। वर्तमान युग में मनुष्यों, समाजों और देशों के बीच परस्पर सद्भाव एवं सामंजस्य स्थापित करने के लिए हमें एक योग आन्दोलन की शुरुआत करनी होगी। हमारे मनीषियों ने वसुधैव कुटुम्बकम् का स्वप्न देखा था, संपूर्ण विश्व को एक परिवार के रूप में देखा था। अगर हम एक परिवार के सदस्य हैं, तो उसमें नीचा कौन और ऊँचा कौन?

वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को साकार रूप देने के लिए हम लोगों का विचार था कि एक संविधान की स्थापना की जाए जिसके द्वारा विश्व के विभिन्न भागों में हो रहे सभी योग कार्यों को संगठित किया जाए और विश्व में एक यौगिक क्रांति की शुरुआत की जाए। आज इस शुभ दिवस पर संतों से मंगल आशीष पाने

के पश्चात् तथा बुद्धिजीवियों, वैज्ञानिकों और समाज के शुभाकांक्षियों से प्रेरणा पाने के बाद हम सहर्ष घोषणा करते हैं कि वह योग संविधान तैयार है, और आज से ही लागू किया जाएगा।

मिशन के योग संविधान की शपथ है – 'हम, पृथ्वी के कोने-कोने में फैले परमहंस सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्य, अपने गुरु की संन्यास स्वर्ण जयंती के अवसर पर प्राचीन योग परम्परा के सन्देश को स्वर्णिम भविष्य के लिए, तथा वैयक्तिक एवं विश्व चेतना के उन्नयन हेतु जन-जन तक पहुँचाने के लिए स्वयं को संकल्प, सच्चाई, प्रेम तथा करुणा के साथ समर्पित करते हैं। अपने गुरु के यौगिक एवं मानवीय जीवन उद्देश्यों को पूरा करने वाले इस योग संविधान को हम अपनाते हैं, जो एक आध्यात्मिक भविष्य के लिए हमारा दिशा निर्देश करेगा। गुरु के प्रति प्रेम और मानव मात्र के लिए करुणा से भरकर, हम डगर-डगर और नगर-नगर योग का दीप प्रज्वलित करने हेतु अपने को अर्पित करते हैं।'

इस योग संविधान का उद्देश्य उन सभी साधकों, शिक्षकों और सच्चे जिज्ञासुओं के प्रयासों को संगठित करना है, जो मानवता के स्वर्णिम भविष्य की कामना रखते हैं। इस योजना के क्रियान्वयन के लिए हमें मात्र एक हजार लोगों की आवश्यकता है। जिन व्यक्तियों का चयन किया जाएगा, उन्हें अपने जीवन के मात्र पन्द्रह दिन समर्पित करने होंगे, और शान्ति का दूत तथा योग का संदेशवाहक बनना होगा। जो इस कार्य में हाथ बँटाना चाहते हैं, उनका स्वागत है। हमें भीड़ नहीं चाहिए, हमें थोड़े-से समर्पित और ईमानदार लोग चाहिए, जो बिना किसी कामना के, बिना किसी महत्त्वाकांक्षा के, बिना किसी उपलब्धि की आशा के चुपचाप अपना कार्य करते रहें।

हमारा लक्ष्य उपलब्धियों के पीछे भागना नहीं, स्वयं को अर्पित करना मात्र है, क्योंकि हमारे प्रेरणास्रोत परमहंस स्वामी सत्यानन्द सरस्वती हैं, जिन्होंने हमारे समक्ष इसका उदाहरण प्रस्तुत किया और हमें मार्गदर्शन प्रदान किया। जब उन्हें ज्ञात हुआ कि हम उनकी त्याग स्वर्ण जयंती मनाने जा रहे हैं तो उन्होंने पत्र लिखा – 'निरंजन, नमो नारायण। मैं सम्मेलन के लिए अपनी शुभकामनाएँ भेज रहा हूँ। तुम जिसे त्याग जयंती कहते हो, मैं उसे समर्पण मुहूर्त कहता हूँ, आत्मार्पण का एक क्षण। मेरे जीवन का वह पावन क्षण जो मैंने पचास वर्ष पूर्व अपने गुरु, स्वामी शिवानन्द जी महाराज के दिव्य सान्निध्य में अनुभव किया था। आज तक समर्पण का वह क्षण मेरी स्मृति में अंकित है। तुम योग आन्दोलन में सहयोग दो, और स्वयं को पुन: समर्पित कर मानवता के उत्थान में कटिबद्ध रहो।' हमें इस बात का गर्व है कि हम एक ऐसे गुरु के शिष्य हैं, जो उपलब्धि के पीछे नहीं भागे, बल्कि जिन्होंने अपने आप को पूर्णतया समर्पित कर दिया और उपलब्धि की सीमाओं को पार कर, आज भी समर्पण के उस क्षण को याद रखे हुए हैं।

– अक्टूबर 1993, विश्व योग सम्मेलन, मुंगेर

योग – पूर्णता का मार्ग

योग एक साधन है, जिसके द्वारा हम अपने जीवन को पूर्ण बनाकर, शरीर, मन, भावना और बुद्धि को संतुलित बनाकर, जीवन के पथ पर आगे बढ़ सकते हैं। योग का समाज में यही वास्तविक प्रयोजन है। हमारी परम्परा हमें यह शिक्षा देती है कि जीवन में अर्थ, काम, धर्म और मोक्ष का समन्वय होना चाहिए। जब इन चारों का समन्वय होता है, तभी हम अपने इस मानव-जीवन के लक्ष्य को पूरा कर पाते हैं। अगर हम एक या दो पक्षों को ही अपनाकर चलते हैं, तो हमारा मानव-जीवन अधूरा ही रहता है। लेकिन समाज ने इन चार अंगों को दो भागों में विभक्त कर दिया, और कहा कि सांसारिक लोगों के लिए अर्थ और काम का मार्ग है, तथा जो व्यक्ति संसार से अपना सम्बन्ध-विच्छेद करना चाहते हैं, त्याग का मार्ग अपनाना चाहते हैं, उनके लिए धर्म और मोक्ष का मार्ग है।

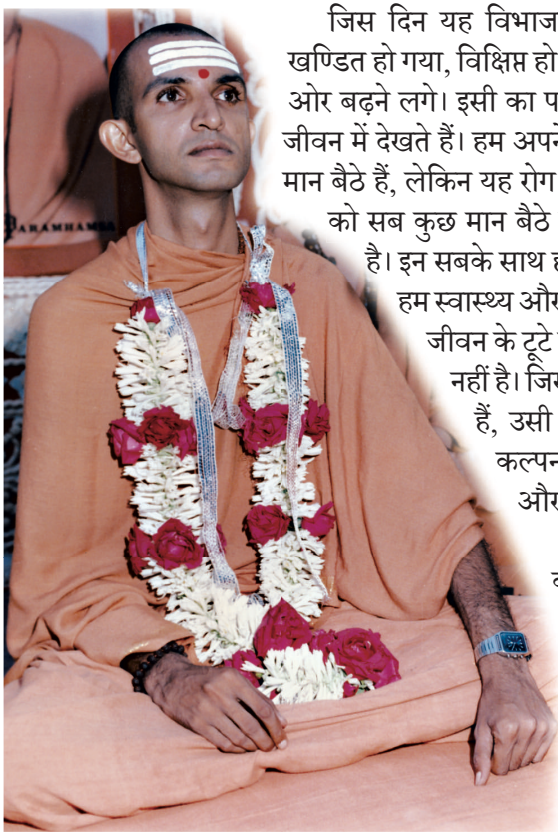

जिस दिन यह विभाजन हुआ, हमारा जीवन खण्डित हो गया, विक्षिप्त हो गया, और हम पतन की ओर बढ़ने लगे। इसी का परिणाम आज हम अपने जीवन में देखते हैं। हम अपने शरीर को ही सब कुछ मान बैठे हैं, लेकिन यह रोग से पीड़ित रहता है। मन को सब कुछ मान बैठे हैं, लेकिन वह अशान्त है। इन सबके साथ हमारी इच्छा होती है कि हम स्वास्थ्य और शान्ति प्राप्त करें, लेकिन जीवन के टूटे हुए तारों को हमने जोड़ा नहीं है। जिस दलदल में हम फँसे हुए हैं, उसी में फँसे रहकर हम यह कल्पना करते हैं कि हम शुद्ध और पवित्र हैं।

सबसे पहले तो आप को यह विचारधारा बदलनी होगी, और अपने जीवन में इन चार अंगों को जोड़ना पड़ेगा, केवल दो को अंगीकार करने से काम नहीं चलेगा। जब हम

बाल योग दिवस

सन् 1995 में स्वामी निरंजनानन्द जी ने बाल योग मित्र मण्डल की स्थापना की और इस बाल योग आन्दोलन को उन्होंने तीन संकल्प दिए – संस्कार, स्वावलम्बन और राष्ट्र-संस्कृति-प्रेम। प्रतिवर्ष इस आन्दोलन से जुड़े बच्चे स्वामीजी के जन्मदिन, 14 फरवरी को बाल योग दिवस के रूप में बड़े धूम-धाम और हर्षोल्लास के साथ मनाते हैं। इस अवसर पर वे हवन एवं भजन-कीर्तन संचालित करते हैं तथा साथ ही नृत्य, संगीत, कराते, आसन, चित्रकला एवं भाषण कला में अपनी क्षमता का प्रदर्शन करते हैं। अपने प्रेरक प्रतिभा प्रदर्शन से वे स्वामीजी के प्रति एक सुन्दर, भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

इस विचार को आत्मसात् कर लेंगे, तभी अपने जीवन में सकारात्मक और सृजनात्मक परिवर्तन ला पायेंगे। हम आपको एक ऐसे विज्ञान, एक ऐसी विद्या के बारे में बतलाने आए हैं, जो आपकी अपनी है, जो कभी पुरानी नहीं होती, जो सनातन है। लेकिन हम लोग इस विद्या को, इस विज्ञान को भूलते जा रहे हैं। अगर हमें आपका सहयोग चाहिए तो एक ही बिन्दु पर। आप यह संकल्प करें कि अपने इस विज्ञान को सही तरीके से समझेंगे और इस विद्या को अपने जीवन में अपनायेंगे।

योग की यह विद्या न शारीरिक है न मानसिक, बल्कि जीवन जीने की एक कला है। जब हमें इस कला का ज्ञान नहीं रहता, तब हमारे जीवन में असंतुलन, व्याधि, विकार, तनाव, भय, चिन्ता, परेशानी आदि उत्पन्न होती है। जहाँ तक हमारा अनुभव रहा है, मनुष्य जीवन में साधना की कमी है। हम बिना साधना किये उपलब्धि चाहते हैं। बीमार हम हैं, लेकिन चाहते हैं कि दवाई कोई और खा ले, और हम ठीक हो जायें। जब हमारे भीतर इस प्रकार की विचारधारा है, तो अन्त में क्या परिणाम होगा?

यही एक समस्या है, जिसका हम हमेशा अनुभव करते हैं। कम-से-कम जो व्यक्ति हमारे पास अपनी समस्याएँ लेकर आते हैं, उनमें तो हम साधना की इसी कमी को देखते हैं। जब इस प्रकार की कमी को देखते हैं तो योग-सूत्रों का एक सूत्र हमें स्मरण हो आता है – *स तु दीर्घकाल नैरन्तर्यसत्कारासेवितो दृढभूमि:*। जिस अभ्यास को दीर्घकाल तक किया जाए, जिस अभ्यास के प्रति हमारी श्रद्धा रहे, आस्था रहे, उसे करने से ठोस आधार निर्मित होता है। जब हमें इस जीवन में यह ठोस आधार मिलता है तब हम अपने दूसरे जीवन की ओर कदम बढ़ा सकते हैं, क्योंकि मनुष्य का जीवन तो बहुआयामी जीवन है।

हमलोग भौतिकवाद से सम्मोहित होकर अपने दूसरे रूप को भूल चुके हैं, लेकिन जब हमारी जिन्दगी में एक प्रयास की शुरुआत होती है, और उस अभ्यास को हम धैर्यपूर्वक, श्रद्धा-भावना के साथ दीर्घकाल तक करते हैं, तब हमारी विचारधारा, व्यवहार, दृष्टिकोण, आदर्श और दर्शन में कुछ परिवर्तन होते हैं।

योग की शुरुआत इसी सूत्र से होनी चाहिए। केवल आसन-प्राणायाम, जप-ध्यान करके हम स्वयं में परिवर्तन नहीं ला सकते। गाड़ी चलानी नहीं आती, उसे नियंत्रण में रखना नहीं आता, लेकिन चलाने के लिए बैठ जाते हैं। अन्त में परिणाम होता है – दुर्घटना। और अगर गाड़ी को नहीं चलाते, तो चाहे आप आधा घण्टा उसमें बैठे रहिए, एक कदम भी आगे नहीं बढ़ पायेंगे। योग एक अनुशासन की प्रक्रिया है, जिसको अपनाने से हम अपने शरीर को, अपनी जीवन-पद्धति को संयत और संतुलित बनाकर आगे बढ़ सकने में सक्षम हो जाते हैं। योग के जो विविध अभ्यास हैं, वे तो मात्र माध्यम हैं, जिनके द्वारा हम अपने व्यक्तित्व को समझ सकें, क्योंकि अंततोगत्वा परिवर्तन व्यक्तित्व और विचारधारा में होना है।

– 1994, जबलपुर योग सम्मलेन

साकार एवं निराकार भक्ति

समाज में प्रचलित मान्यता तो यही है कि आत्मानुभव, आत्मप्राप्ति, आत्मज्ञान या आत्मसाक्षात्कार के लिए जो भी उपाय या विधियाँ मनुष्य अपनाता है, उनमें भक्ति योग ही सब से सरल, सुसाध्य, सुलभ और श्रेष्ठ है। परमगुरु स्वामी शिवानन्द जी कहा करते थे कि भक्तियोग सर्वाधिक द्रुत, निरापद, सुगम और निश्चित मार्ग है। शास्त्र भी कहते हैं कि कलियुग में केवल भगवन्नाम स्मरण मनुष्य को मुक्ति के द्वार तक ले जाने में सक्षम है।

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

लेकिन भक्ति योग के सम्बन्ध में एक समस्या उठ खड़ी होती है कि भक्ति के विषय में जब हम बौद्धिक विश्लेषण एवं चिन्तन करने लगते हैं, तब इसके गूढ़ रहस्य को समझ नहीं पाते। आप स्वयं चिन्तन कीजिये कि आपके व्यक्तिगत जीवन में भक्ति की क्या अवधारणा है। क्या ईश्वर में आस्था रखना ही भक्ति है? क्या रोज प्रात: मंदिर में धूप-दीप दिखाना ही भक्ति है? क्या सत्संग और संतों की सेवा ही भक्ति है? क्या हरि कथा प्रसंग सुनकर अश्रुपात या रोमाञ्च हो जाना ही भक्ति है? हर व्यक्ति की अलग-अलग परिभाषा होती है भक्ति की, और अपनी परिभाषा एवं विचारधारा के अनुसार हम कभी साकार भक्ति को महत्त्व देते हैं, तो कभी निराकार को।

मान लें कि हम साकार की उपासना करते आये हैं और कोई हमें कह दे कि साकार की नहीं, निराकार की उपासना उत्तम है, तो हम पूर्व की उपासना को छोड़ कर इस नवीन उपासना में लग जाते हैं। उपासना में यह परिवर्तन स्वयं अन्तर्द्वन्द्व का परिचायक है, क्योंकि हमें खुद मालूम नहीं कि भक्ति क्या है। कोई कहता है साकार की उपासना करो, तो हम उसे ही उत्तम मानकर वही करते हैं। कोई कहता है कि निराकार की उपासना करो, तो हम उसे उत्तम मानकर करने लगते हैं। ऐसा तो मनुष्य का भ्रान्तिपूर्ण स्वभाव है तथा स्वभाव की यही चञ्चलता व्यवहार, विचार और कर्म में दिखलायी देती है। जब साधक अपनी अस्थिर मानसिकता को शान्त कर, स्थिर और केन्द्रित होकर, दोनों में से किसी एक मार्ग को पकड़ता है, तब उसी मार्ग में उसे उपलब्धि होती है।

वास्तव में साकार और निराकार, दो अलग मार्ग होते हुए भी इनके गुणों में कोई भेद नहीं है, लेकिन जीवन में मनुष्य का कोई साधनात्मक आधार, साधनात्मक भूमिका नहीं होने पर बौद्धिक रूप से सब समझते हुए भी वह अन्तर्द्वन्द्व में पड़ा

रहता है। जीवन में साधनात्मक भूमिका के अभाव में हमलोग कभी इधर, कभी उधर डगमगाते रहते हैं और प्रश्न करते हैं कि साकार और निराकार में भेद क्या है।

साकार और निराकार, दोनों एक ही परमात्मा को अपने भीतर धारण करने की प्रक्रियायें हैं। साकार और निराकार को हम जल और वाष्प के रूप में देख सकते हैं। दोनों में भेद है और नहीं भी है, क्योंकि वाष्प जल का गैसीय रूप है और जब वही वाष्प घनीभूत हो जाती है तो जल का रूप ले लेती है। अगर कमरे में वाष्प भरी हो तो उस कमरे में आपको इधर से उधर जाने में कोई कठिनाई नहीं होगी, पर जब वाष्प जल बनकर जलाशय और नदी का रूप धारण करती है, तब उस जलराशि में चलना सम्भव नहीं होता। तत्त्व एक है, लेकिन गुणों में अन्तर आ जाता है। निराकार और साकार भी इसी के सदृश हैं। निराकार वाष्प और साकार जल जैसा है। अब प्रश्न है कि इन दोनों में मनुष्य के लिये कौन उत्तम फल देता है?

संसार में दोनों प्रकार की उपासनायें प्रचलित हैं, साकार और निराकार। दोनों में समानता अवश्य है, लेकिन साकार सरल है और निराकार कठिन। एक ऐसा मनुष्य जिसकी कोई साधनात्मक भूमिका नहीं है, वह सर्वप्रथम किस मार्ग का चयन करेगा? साकार मार्ग का। भक्ति में पहला कदम साकार से लिया जाता है। साकार के द्वारा ही मानव जीवन में परिवर्तन होना सम्भव है, क्योंकि इस उपासना के क्रम में ईश्वर तत्त्व में मन को केन्द्रित करना सहज होता है। निराकार की उपासना में ईश्वरीय तत्त्व पर मन को केन्द्रित करना अत्यन्त कठिन हो जाता है, क्योंकि

निराकार में सभी अनुभूतियों का निषेध होना आवश्यक है। निराकार की स्थिति है – *नेति, नेति,* यह नहीं, यह नहीं।

इसीलिये गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं कि साकार ही, जहाँ से भक्ति का प्रारम्भ होता है, मुझे अधिक मान्य है। उनका मत है कि जो भक्त अपनी सम्पूर्ण भावना को केन्द्रित कर उनके साकार रूप की उपासना करता है, उनके साकार रूप में तन्मय होने का प्रयत्न करता है, वह उत्तम योगवेत्ता है।

मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते।
श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मता:॥12.2॥

साकार उपासना को इसलिये भी श्रेष्ठ माना जाता है कि साधारण-से-साधारण मन भी साकार में स्वयं को स्थिर कर लेता है। चेतना की एकाग्रता का प्रारम्भ साकार उपासना से होता है। द्वैत को समाप्त करने और अद्वैत की साधना के लिए साकार सुलभ है। निराकार उपासना में कभी-कभी भ्रम होता है कि मैं जो कर रहा हूँ, वह ठीक है या नहीं, मैं गलत रास्ते पर तो नहीं हूँ। कभी-कभी निराकार के साधक को कठिन तपस्या करनी पड़ती है, कभी-कभी सुषुप्ति का अनुभव होता है, क्योंकि मन को केन्द्रित रखने का कोई आधार तो रहता नहीं। जबकि साकार में प्रीति हो जाती है, मन मिट जाता है, सुख प्राप्त होता है, नम्रता और एकाग्रता की स्थिति प्राप्त होती है। ये सभी साकार की अवस्थायें हैं, जो एक साधक अपने जीवन में अनुभव करता है। इसका मतलब यह नहीं कि निराकार हेय या उपेक्ष्य है। याद रखिये कि निराकार उपासना विलक्षण, प्रतिभासम्पन्न व्यक्तियों के लिए है, जिन्होंने उच्च, परा अवस्था को प्राप्त किया है।

– 1996, मुंगेर

बच्चों और युवाओं के लिए योग

2000-09

वयस्क लोग योग को अभ्यास के रूप में लेते हैं। सबेरे उठकर आसन, प्राणायाम, जप, ध्यान, पूजा करेंगे और सोचेंगे कि चलो आज मैंने अपना आध्यात्मिक कर्तव्य पूरा किया। लेकिन यौगिक विचारधाराओं को अपने जीवन में उतारने के लिए जो प्रयास होता है, उसमें वे लोग विफल हो जाते हैं क्योंकि बहुत-सी समस्याएँ रहती हैं, और बचपन से उनको कोई शिक्षा तो मिली नहीं है। एक सीमित दायरे में रहने वाला व्यक्ति है, जिसके मनोभाव संकीर्ण हैं, अपने मन, विचार और भावनाओं को किस प्रकार संयोजित कर सकें, यह उसने सीखा नहीं है, जाना नहीं है। ऐसा व्यक्ति किस प्रकार दूसरे को अच्छे संस्कार दे पाएगा? पिछले 35 वर्षों से हम लोग योग का प्रचार करके देख ही रहे हैं कि वयस्कों को कितना फायदा हुआ। हम तो कहेंगे कि अगर प्रयास हुआ है सौ प्रतिशत, तो परिणाम मिला दस प्रतिशत, क्योंकि उनका मन और जीवन पूर्वानुकूलित है। उसको बदलना सरल नहीं, बहुत कठिन है।

इसलिए यहाँ पर बाल योग मित्र मण्डल की स्थापना हुई और बच्चों के लिए कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। 7 से 14 वर्ष की उम्र वाले बच्चे, जो बाल योग मित्र मण्डल से जुड़ते हैं और योगाभ्यास करते हैं, वे तो अभी से अपने जीवन में कुछ ऐसे यौगिक विचारों, मान्यताओं और बीजों को स्थान दे रहे हैं, जो उनके जीवन में फलित हों। इसलिए योग को घर-घर ले जाने का जो लक्ष्य है, उस कार्यक्रम की शुरुआत होती है बच्चों से, बड़ों से नहीं।

योग को एक अभ्यास के रूप में नहीं, बल्कि जीवन के एक अंग के रूप में देखना है और चाहे कार्यालय, खेत, दुकान या जिस क्षेत्र में भी रहकर आप अपना कार्य करें, एक यौगिक विचारधारा और दृष्टिकोण द्वारा प्रेरित हों, तब इसे कहते हैं योग को आत्मसात् करना। इस योग विद्या को आत्मसात् करने का कार्यक्रम बच्चों से प्रारम्भ हुआ। सन् 1995 में कार्य प्रारम्भ हुआ मुंगेर के 5 बच्चों से और आज 6 साल के बाद केवल मुंगेर शहर में हमारे करीब 2000 बच्चे योग प्रचारक, योग अनुदेशक और योग प्रदर्शक हैं। इन्होंने पूरे भारत में लगभग 300 विद्यालयों में जाकर योग की शिक्षा दी है और करीब पचास हजार बच्चों को योग से जोड़ा है। और जोड़ा ही नहीं, बल्कि उनका ध्यान भी रखते हैं, उनको प्रेरणा भी देते हैं कि तुम इस अभ्यास को करते रहो।

उसके बाद 14 साल से ऊपर के जो बच्चे हैं, जो महाविद्यालयों में पढ़ते हैं, उनके लिए इस वर्ष युवा योग मित्र मण्डल की स्थापना हुई। इस युवा योग मित्र मण्डल में भी हमलोगों ने प्रारम्भ किया योग से, किन्तु हमारी इच्छा है कि इनको योग से सेवा तक ले जाएँ, क्योंकि अगर योग को बचपन में ही आत्मसात् कर

लिया जाए, तो अपने युवा जीवन में हम अपनी प्रतिभा को समाज के हित में अर्पित करने की शिक्षा ग्रहण करें और उसका मार्ग है 'सेवा'। समाज निर्माण के किसी भी क्षेत्र में जब कभी सेवा की आवश्यकता होगी, तब इस कार्य में युवा योग मित्र मण्डल आगे रहेगा। सन् 1993 में जब मुंगेर में विश्व योग सम्मेलन हुआ था, उस समय पूरे भारत तथा विश्व से आए लोगों के सामने हमने एक माँग रखी थी। हमने कहा कि अपने पूरे जीवन में केवल एक बार 15 दिन का समय आप योग के कार्य में दीजिये। हजारों की संख्या में जो लोग थे, उनमें से आज तक कोई अपने जीवन के 15 दिन नहीं दे पाया, सब विफल हो गए, क्योंकि वे सब वयस्क थे। कमाना है, पढ़ाना है, परिवार चलाना है, तो 15 दिन का समय कहाँ से मिलेगा किसी को?

तब हमने सोचा कि जो व्यक्ति पूरे जीवनकाल में राष्ट्र के हित में 15 दिन का समय नहीं दे सकता है, उससे क्या अपेक्षा की जाए? क्या वह व्यक्ति योग के मार्ग में आगे बढ़ पाएगा? नहीं। यही कारण था कि यहाँ पर बच्चों और युवकों को प्रेरित किया गया कि वे योग से जुड़ें। और उन लोगों ने योग से जुड़कर योग के परिणामों को अपने जीवन में अनुभव किया है। योग के प्रचार में उन्होंने जो सहयोग दिया है, उसके लिए वे सब निश्चित रूप से साधुवाद के पात्र हैं और वे ही योग के दूत बनेंगे।

योग दूत कोई पद नहीं है, बल्कि यह ऐसा व्यक्ति होता है, जो अपना जीवन योग की छत्रछाया में जीता है एवं उसको देखकर दूसरे लोग प्रेरित एवं अनुप्राणित होते हैं। इसके लिए हमने दो मार्ग अपनाये हैं। छोटे बच्चों के लिए योग की शिक्षा, ताकि वे अपने जीवन में अनुशासन, मर्यादा तथा संयम की नींव डाल सकें; संस्कारों को, अच्छे गुणों को विकसित कर सकें। युवक, जिन्हें पूर्व में योग से जुड़ने का अवसर नहीं मिला, वे योग से जुड़ें, और योग को आत्मसात् करने का प्रयास करें, योग का प्रचार करें। और जब योग धीरे-धीरे सिद्ध होता है, योग के स्वामी बन जाते हैं, तब जो कुछ उन्होंने पाया है, उसको कर्म के माध्यम से, सेवा के माध्यम से व्यक्त करें, ताकि सभी का उत्थान और कल्याण हो सके। यही लक्ष्य हर युवक

को योग और समाज से जुड़ने के लिए प्रेरित करेगा। युवा योग मित्र मण्डल तथा बाल योग मित्र मण्डल ने जो कार्य किया है, वह वाकई बहुत बड़ा कार्य है।

बाल योग मित्र मण्डल का नारा है – संस्कार, स्वावलम्बन और राष्ट्र संस्कृति प्रेम। व्यक्ति के जीवन में इन तीनों की ही आवश्यकता है। संस्कार मनुष्य को मिलता कहाँ है? पहले कहते थे कि संस्कार घर से मिलता है, लेकिन इस आधुनिक युग में संस्कार मिलने का क्षेत्र बहुत सीमित हो गया है। लोग सोचते हैं कि धर्म में संस्कार मिलता है। लेकिन धर्म में भी संस्कार नहीं मिलता। संस्कार मनुष्य तभी प्राप्त करता है, जब उसका मन एकाग्र, शान्त और संयमी रहता है। स्वावलम्बन का मतलब है अपने पैरों पर खड़े होने की क्षमता, किसी पर आश्रित नहीं रहना, बल्कि अपने पुरुषार्थ और सामर्थ्य पर विश्वास रखना। राष्ट्र संस्कृति प्रेम का तात्पर्य है भारतीय संस्कृति से प्रेम करना। आज तक इतिहास ने देखा है कि अनेक सभ्यताओं ने जन्म लिया और मिट गयीं, किन्तु आदिकाल से आज तक जो अनवरत रूप से चली आई है, वह हमारी भारतीय संस्कृति है, क्योंकि अपनी संस्कृति ने जीवन के सभी पक्षों को जाना, समझा और स्वीकार किया।

युवा योग मित्र मण्डल, जो नवयुवकों का संगठन है, उसका नारा है योग, सेवा और समर्पण। नवयुवकों के लिए ये तीन विचार आवश्यक हैं, ताकि वे कभी नहीं भूलें कि उनको योग से जुड़कर रहना है। एक बात मैं पुन: बतला दूँ कि योग आसन-प्राणायाम नहीं है, वे मात्र अभ्यास हैं। योग को प्रतिक्षण जीना है। योग का मतलब होता है, अपने आपको स्वयं से जोड़ना। अपने विचार को अपने दर्शन के साथ जोड़ना है, अपनी भावना को संवेदनशीलता के साथ, कोमलता के साथ जोड़ना है। अच्छाई से जुड़ने का जो क्रम है, उसी को कहते हैं योग। सेवा दूसरा नारा है ताकि हममें जो शक्ति, प्रतिभा और सामर्थ्य है, उसका उपयोग दूसरों के उत्थान और विकास के लिए करें। पेड़ फल देता है, खुद खाने के लिए नहीं, बल्कि दूसरों को खिलाने के लिए। जहां सहज रूप से अपनी अच्छाई दूसरों को दी जा सके, दूसरों के जीवन में खुशी बाँटी जा सके और दूसरों के आँसू पोंछे जा सकें, उस कार्य पद्धति को कहते हैं सेवा। अत: योग को आत्मसात् करना, सेवा को अपने पुरुषार्थ का माध्यम बनाना और सभी के कल्याण की चिन्ता करना, यह उद्देश्य है युवा योग मित्र मण्डल का, क्योंकि उनमें शक्ति अपार है। देखा जाए तो वास्तव में वे सोए हुए हनुमान हैं, उनको जगाने की आवश्यकता है। युवा योग मित्र मण्डल ने पिछले डेढ़-दो वर्षों के भीतर ही अनेक युवकों को योग का प्रशिक्षण दिया है। मुंगेर के अलग-अलग क्षेत्रों में इन्होंने योग सत्रों का संचालन बहुत सफलतापूर्वक किया है। योग को अगर हम बच्चों और नवयुवकों से जोड़ सकें, तो निश्चित रूप से हम अपने राष्ट्र के लिए एक अच्छे भविष्य की कल्पना कर सकते हैं।

– जून 2001, मुंगेर

आत्मशुद्धि और आत्मभाव

हमलोगों को यह याद रखना चाहिए कि योग मात्र साधना नहीं है, जिसको आप अपने घर के एक कमरे में करते हैं। योग वह ध्यान या जप नहीं है, जिसको आप अपनी शान्ति के लिए जीवन में अपनाते हैं। ये सब तो विधियाँ हैं। आसन, ध्यान, जप, त्याग, तपस्या, यम-नियम – ये सब विधियाँ हैं। यहाँ तक कि क्रिया योग, कुण्डलिनी योग, मंत्र योग आदि सब योग की विधियाँ हैं, और इन विधियों को सम्पन्न करने से हम अपने जीवन में योग का अनुभव करते हैं। अन्त में वह योग होता है आत्मा का आत्मा के साथ और उसके बाद आत्मा का परमात्मा के साथ। आत्मा से आत्मा का योग, इसका अर्थ क्या होता है? एक को दूसरे से जोड़ना। जब हम अपने को दूसरों से जोड़ पाते हैं, तब आत्मा का आत्मा से योग होता है। हमारी आत्मा का योग आपकी आत्मा के साथ होता है। इसी को हमारे गुरु, श्री स्वामी सत्यानन्द जी आत्मभाव कहते हैं, अपने को दूसरों में देखना। लेकिन इसके लिए यह आवश्यक है कि पहले आत्मशुद्धि हो।

जब तक आत्मशुद्धि नहीं होती, तब तक हम अपने आपको, अपनी आत्मा को दूसरों की आत्मा से जोड़ नहीं पाते हैं। एक दूरी बनी रहती है। किस प्रकार की दूरी? दूसरों का दु:ख हम अपना नहीं मानते हैं। हम अपने ही दु:ख में लीन रहते हैं। दूसरों के ऐश्वर्य से हम सुखी नहीं होते, बल्कि और भी दु:खी होते हैं। इसीलिए हमारे परमगुरु स्वामी शिवानन्द जी एक बात अपने शिष्यों और साधकों को बार-बार कहा करते थे कि जिस निष्ठा, आस्था और कामना के साथ तुम योग का अभ्यास करते हो, उसी निष्ठा, आस्था और विश्वास के साथ तुम अपने आपको दूसरों से जोड़ने का प्रयास करो।

सभी गुरुओं-मनीषियों ने एक ही बात कही है – अगर योग को अपने जीवन में सिद्ध करना चाहते हो तो साधना के अतिरिक्त स्वयं को दूसरों से जोड़ने का प्रयास करो। ईसामसीह ने भी कहा कि ईश्वर भक्ति के साथ-साथ परोपकार का कार्य करो। हमारे संत-मनीषियों ने कहा ध्यान, जप, तप करते हो तो करो, लेकिन इसे ही अपने जीवन का अंतिम लक्ष्य मत मानो। जीवन का अंतिम लक्ष्य है परोपकार। और यही वह योग है, जिसकी शिक्षा हमारे गुरुजी हम सबको दे रहे हैं – आत्म-शुद्धि और परोपकार, विचारशुद्धि और सेवा, जीवन-शुद्धि और करुणा। हमारे गुरुजी बतलाया करते हैं कि जब तक मनुष्य परोपकार नहीं करता, जब तक मनुष्य का दिल द्रवित नहीं होता, तब तक वह कर्मबन्धन में जकड़ा रहता है और माया जाल में फँसता जाता है।

हमारे परमगुरु, स्वामी शिवानन्द जी ने अपने शिष्यों को योग के साथ-साथ अपने कर्मों को भी सिद्ध करने का मार्ग बतलाया है। बहुत ही सुन्दर मार्ग है, जिसको

हमलोग कहते हैं – शिवाष्टांग योग, शिवानन्द जी द्वारा प्रदर्शित अष्टांग योग। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि तो महर्षि पतंजलि का अष्टांग योग है। स्वामी शिवानन्द जी कहा करते थे कि पहले पतंजलि का योग सिद्ध करो और उसको बाद इस योग को सिद्ध करो। इसके पहले चरण में है सेवा, दूसरे चरण में है प्रेम और करुणा। तीसरे चरण में है दान की प्रवृत्ति को जाग्रत करना। जब इस प्रकार स्वार्थ-वृत्ति से ऊपर उठकर हम देने लगते हैं, तब आत्मशुद्धि की अवस्था आती है। और जब आत्मशुद्धि होती है, जब हमारा दिल, हमारी मानसिकता बदल जाती है, तब जाकर आदमी अच्छा बनता है। यह पाँचवाँ आयाम है शिवाष्टांग योग का और जब हम अच्छे बन जाते हैं, तो हमारे द्वारा जो भी कार्य संपादित होते हैं, वे अच्छे ही होते हैं। जब तुम अच्छे होगे, तुम अच्छा करोगे। उसके बाद वे कहा करते थे, ध्यान करो। पहले ध्यान के अभ्यास में हमने अपने आपको समेटा था, और शिवाष्टांग योग में ध्यान में अपने आपको फैलाते हैं।

शिवाष्टांग योग में जब हमारे परम गुरु ने ध्यान का आदेश दिया, तो वह पुन: एक आत्म-परीक्षण का अवसर है। हमने तो आत्मशुद्धि प्राप्त की, अपने आचरण में और व्यवहार में। अब पुन: एक बार आत्म-परीक्षण करके देखा जाए कि हम कहाँ तक पहुँचे हैं। क्या हमारी आसक्ति हमें संसार के विषयों में बाँधती है? या हम अपने से जुड़े नहीं रहकर दूसरों से जुड़े हैं, अपने दु:ख की परवाह नहीं करके हम दूसरों के दु:खों का ख्याल करते हैं। फिर इस ध्यान की अवस्था में व्यापकता का अनुभव होता है, और जब व्यापकता का अनुभव होता है, तो वह है आठवाँ आयाम, जिसको कहते हैं आत्म-ज्ञान या आत्म-साक्षात्कार।

– अगस्त 2001, धनबाद

अपने जीवन-उद्यान के माली बनो

आज के युग में हमारे जीवन में योग की क्या प्रासंगिकता है? इस विषय पर चर्चा शुरू करने के पूर्व आपको एक दृष्टान्त बतलाते हैं। एक माली के पास एक छोटा-सा जमीन का टुकड़ा है और उस बंजर भूमि को वह एक सुन्दर बगीचे में बदलना चाहता है। उसे क्या करना होगा? क्या उसे केवल बीज लाने होंगे और बो देने होंगे, इस आशा के साथ कि एक दिन ये बीज पौधों के रूप में उगेंगे, उन पर फल-फूल लगेंगे? या फिर उसको पहले भूमि को तैयार करना होगा, मोथे निकालने होंगे, कंकड़-पत्थर निकालने होंगे, भूमि को जोतना होगा और जब भूमि तैयार हो जाए तब फिर बीज लाकर बोने होंगे और उनकी देखभाल करनी होगी, जब तक कि उनमें फल-फूल न आने लग जाएँ। जब एक माली अपनी पसन्द का बगीचा बनाने के लिए इतनी लम्बी प्रक्रिया से गुजर सकता है तो हम बागवानी की इस विचारधारा को अपने जीवन में क्यों नहीं उतार सकते?

यदि आप अपने जीवन रूपी बगीचे के माली बन जायें तो आपके जीवन की प्रसुप्त क्षमतायें अपने आप जाग्रत होने लगेंगी, क्योंकि सारी क्षमतायें आपके भीतर हैं, केवल प्रकट होने के उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा में हैं। और हमें अपने आपको यह अवसर प्रदान करना है।

हमलोग अपने जीवन में जो भाग-दौड़ करते हैं, उसके पीछे प्रयोजन क्या रहता है? यही न कि हमें समृद्धि मिले, हम अधिक सुरक्षित हों, हम समाज में नाम कमा सकें, समाज के निर्माण में एक सकारात्मक भूमिका निभा सकें। मनुष्य का जो भी प्रयास या कर्म होता है, उसके पीछे नाम, यश, प्रसन्नता, सुख-सम्पत्ति, समृद्धि और शान्ति का ही उद्देश्य होता है। जन्म से मृत्यु तक हम इन्हीं की कामना करते

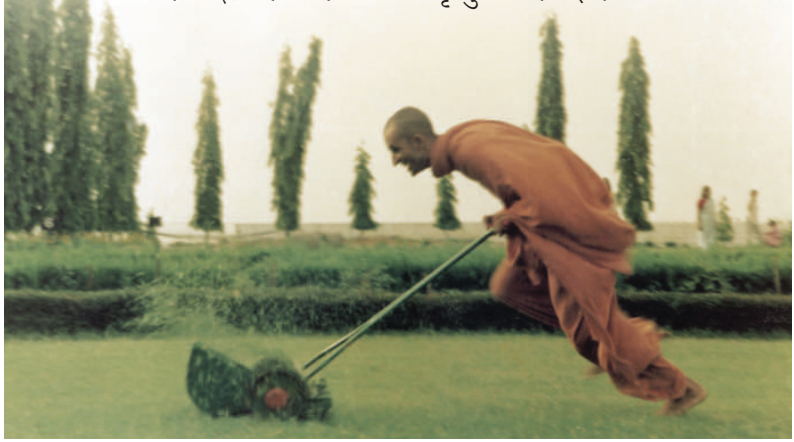

हैं, लेकिन इस कामना के कारण हमलोगों की जो मानसिकता बन जाती है, वही हम लोगों के मनोविकास में बाधक सिद्ध होती है।

योग में मुख्य बिन्दु है मनुष्य का मनोविकास। इसी को योग का आधार समझना चाहिए। मनोविकास की प्रक्रिया की शिक्षा हमें योग में प्राप्त होती है। इस प्रक्रिया का सम्बन्ध हमारे व्यावहारिक, सामाजिक और भौतिक जीवन के साथ है। हमें अपने मन को एक खेत के रूप में देखना होगा, जहाँ पर हम काम कर सकते हैं। यदि हम इस खेत की उपेक्षा कर दें और अच्छी तरह से खेती न करें, तो अन्त में क्या होगा? वहाँ पर बहुत-सी घास-फूस उग आयेगी और तब तक वह जमीन अनुपयोगी रहेगी जब तक कि वहाँ से घास-फूस न हटा दी जाये। इसी तरह अपने जीवन में भी सांसारिक उपलब्धि, समृद्धि और संतोष की खोज में हम उस मौलिक नियम की उपेक्षा कर देते हैं, जिसके द्वारा मनुष्य का जीवन संचालित होता है। जो मौलिक नियम मनुष्य के जीवन का संचालन करता है, वह है मन का विकास। हमने कभी मन के विकास को महत्त्वपूर्ण नहीं समझा, बल्कि जीवन में प्रगति, सफलता और सुरक्षा के लिए बुद्धि के विकास को ही महत्त्वपूर्ण माना है। बुद्धि तो मन का केवल एक छोटा-सा अंश है। योग का लक्ष्य है, सम्पूर्ण मन का विकास, और यही योग का आधार है।

योग-परम्परा के अनुसार अहंकार, बुद्धि, मनस् तथा चित्त, ये मनुष्य मन के चार पक्ष हैं। मनस् यानि चिन्तन-मनन करने की क्षमता और चित्त यानि जीवन भर की स्मृतियों तथा संस्कारों का संग्रह, जिन्हें हम जीवन पर्यन्त साथ लेकर चलते हैं। इन चारों में से आज तक हमने अपनी बुद्धि के विकास को ही महत्त्व दिया है – पुस्तकों को पढ़ना, अध्ययन करना, जानना। हमने बुद्धि को सक्रिय बनाने पर जोर दिया है, परन्तु हम अहंकार के कार्य-कलापों को व्यवस्थित या नियंत्रित नहीं कर पाए। हम उस ज्ञान का उपयोग नहीं कर पाए जो हमारी स्मृति में संचित है। हम अपनी चिन्तन-मनन की क्षमता का ठीक तरह से उपयोग नहीं कर पाए हैं। आज अपने चारों तरफ इतना ज्ञान, विवेक और समझ होने के बावजूद भी हम जीवन के मौलिक तथ्यों एवं परिस्थितियों से अनभिज्ञ हैं।

योग शुरू से ही यह बात कहता आया है कि जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए आपको अपने मन पर ध्यान केन्द्रित करना होगा, जो कि हमारी शरीर रूपी गाड़ी का इंजन है। जिस प्रकार एक कार इंजन के बिना नहीं चल सकती, उसी प्रकार यदि इस जीवन का मार्गदर्शक मन न हो, तो यह जीवन बेकार हो जाता है। प्राचीन शास्त्रों के अनुसार मन की क्षमताओं को व्यवस्थित करना तथा उनका विकास योग का लक्ष्य है। योग एक अनुशासन है जिसका पालन किया जा सके तथा जिसे जीवन में अपनाया जा सके, और इसका परिणाम है, मानसिक संतुलन की प्राप्ति।

– अगस्त 2005, दिल्ली

2010-19

बिहार योग विद्यालय की स्वर्ण जयंती

हम, श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती के पौत्र शिष्य और श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के पुत्र शिष्य, स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती आप सबका इस तृतीय विश्व योग सम्मेलन में हार्दिक आभिनन्दन करते हैं। इन योग सम्मेलनों का एक विशेष इतिहास रहा है जिसके बारे में हम आपको जानकारी देना चाहते हैं।

विश्व का सर्वप्रथम विश्व योग सम्मेलन हमारे परमगुरु, स्वामी शिवानन्द जी ने सन् 1953 में ऋषिकेश में आयोजित किया था, जिसके अंतर्गत भारतवर्ष तथा विश्व में योग की प्रथम व्यावहारिक शिक्षा प्रदान की गई थी। हमारे परमगुरु, स्वामी

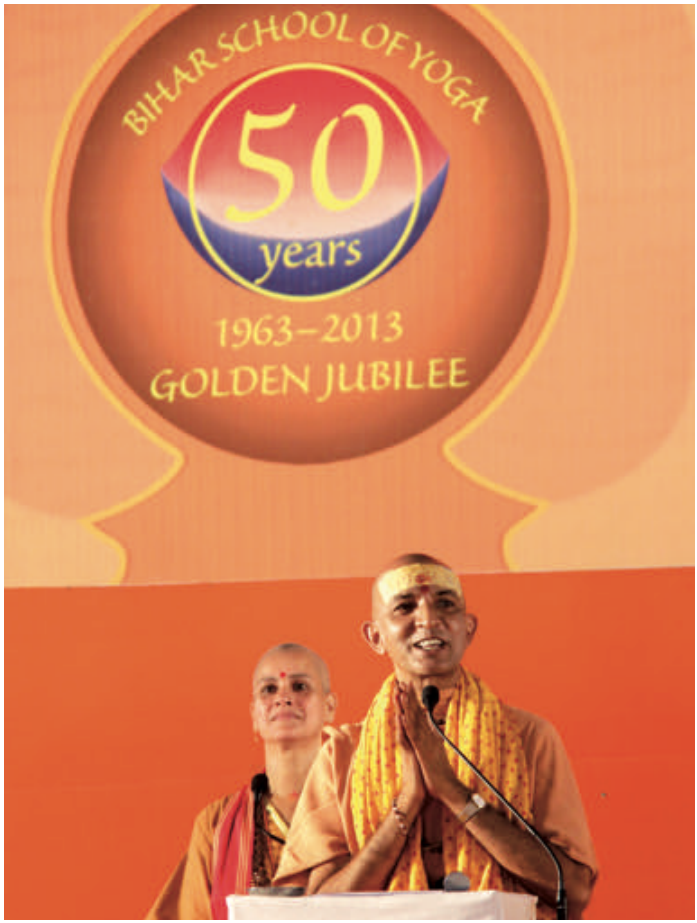

शिवानन्द जी ने यह घोषणा की थी कि हर व्यक्ति एक अच्छा जीवन, एक दिव्य जीवन बिताने में सक्षम है, और उस दिव्य जीवन को अपनाने के लिए योग तथा वेदान्त हर मनुष्य की सहायता करते हैं।

उसके बाद दूसरा विश्व योग सम्मेलन मुंगेर की इस पावन धरती पर सन् 1973 में स्वामी सत्यानन्द जी द्वारा सम्पन्न किया गया था। इस सम्मेलन के पश्चात् पूरे विश्व में योग का प्रचार दावानल की तरह हुआ और योग घर-घर का शब्द बन गया।

इसके बीस वर्ष पश्चात्, सन् 1993 में मुंगेर पुन: एक विश्व योग सम्मेलन का साक्षी बना था। इस तृतीय विश्व योग सम्मेलन के पश्चात् योग की व्यावहारिक और वैज्ञानिक पद्धतियाँ समाज के हर क्षेत्र में जाकर, हर प्रकार के उद्योग और प्रतिष्ठान में पहुँचकर, लोगों की प्रतिभाओं और सामर्थ्यों के विकास के लिये प्रयुक्त की गयीं।

बीस साल बाद आज हम पुन: मुंगेर में एक बृहत् विश्व योग सम्मेलन मना रहे हैं। इस बार के योग सम्मेलन के पीछे भी एक कारण है – बिहार योग विद्यालय की स्वर्ण जयन्ती। स्वर्ण जयन्ती का मतलब बिहार योग विद्यालय की योग सेवा के पचास वर्ष पूरे हुए हैं और इसी ऐतिहासिक अवसर को हम लोग आज मना रहे हैं।

यह एक निर्विवाद सत्य है कि आज विश्व में जो सबसे सशक्त योग पद्धति है, वह मुंगेर द्वारा प्रसारित बिहार योग पद्धति है। इस विश्व योग सम्मेलन में अगले दो दशकों के लिए योगविद्या के प्रचार और प्रसार की जो रूपरेखा तैयार की जायेगी, वह भविष्य में इस संस्था के योग कार्यों को दिशा देगी।

इस योग आन्दोलन के प्रणेता हैं हमारे परमगुरु, श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज और हमारे अपने गुरु, श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज, जिनकी प्रेरणा और कृपा से हमलोग आज यहाँ पर योग के विषय पर चर्चा करने के लिए एकत्र हुए हैं।

आज समाज में योग को केवल शारीरिक व्यायाम के रूप में देखा जाता है, एक ऐसे अभ्यास के रूप में समझा जाता है जिसकी सीमा केवल आसन तक है। लेकिन योग तो व्यक्तित्व का निर्माण है। अभी हमलोगों का व्यक्तित्व कैसा है? हमारा मन हमेशा चंचल रहता है और चंचलता के कारण वह अपनी ऊर्जा का कभी सदुपयोग नहीं कर पाता। बिजली के बल्ब का प्रकाश चारों तरफ छितराया रहता है, लेकिन अगर इसी प्रकाश को हम एक बिन्दु में केन्द्रित कर दें तो वह लेज़र के रूप में परिवर्तित हो जायेगा और लोहे को भी पिघला देगा। उसमें इतनी क्षमता रहती है। वही स्थिति मानव मन की होती है। मानव मन की ऊर्जा प्रकाश की तरह बिखरी हुई है, लेकिन जब हम इस मानसिक ऊर्जा को एक बिन्दु पर केन्द्रित कर देते हैं तो केवल कुशाग्रबुद्धि ही नहीं बनते, बल्कि हमारी आंतरिक प्रतिभाओं का जो सर्वतोमुखी विकास होता है, वह जीवन में पूर्णता लाता है और हमें सुख, शांति और सम्पदा के मार्ग पर आगे ले जाता है।

– अक्टूबर 2013, विश्व योग सम्मेलन, मुंगेर

ध्यान का मन पर प्रभाव

योग की जितनी पद्धतियाँ हैं, चाहे वे आसन-प्राणायाम की हों या ध्यान की, उनका मानव व्यक्तित्व और स्वभाव पर अलग-अलग असर पड़ता है। ध्यान का क्या प्रभाव होता है? पहला प्रभाव होता है मानसिक शिथिलीकरण, दूसरा प्रभाव होता है एकाग्रता, तीसरा प्रभाव है तन्मयता और चौथा प्रभाव है वह क्षमता जिसके माध्यम से हम मन के गहन स्तरों का अन्वेषण करें।

जब हम कहते हैं कि ध्यान का पहला असर होता है रिलेक्सेशन या शिथिलीकरण, तो यह असर होता है हमारे चेतन मन में। चेतन मन ही संसार के साथ उलझता है, वही तनाव और स्ट्रेस लेता है, वही चिन्ता करता है। इसलिये चेतन मन को रिलेक्स करने के लिये ध्यान का पहला प्रयास होता है।

जब चेतन मन शिथिल और शांत होता है, तब फिर एकाग्रता आती है क्योंकि मन के विक्षेप समाप्त हो जाते हैं। उसके बाद आती है तन्मयता। यह तन्मयता भी चेतन मन तक ही सीमित है। जब दो प्रेमी आपस में बात करते हैं तो उनका मन पूरी तरह से तन्मय हो जाता है। घण्टों बीत जाते हैं पर समय का आभास ही नहीं होता।

ध्यान की ये जो पहली तीन अवस्थाएँ आपको बतलायीं – शिथिलीकरण, एकाग्रता और तन्मयता, इनका सम्बन्ध केवल चेतन मन के साथ होता है। चेतन स्तर पर ध्यान आपको द्रष्टा बनाता है। आप अपने जीवन के विक्षेप और तनाव देखते हैं। आप अपने मन को शान्त करने का, एकाग्र और तन्मय बनाने का प्रयास करते हैं। फिर ध्यान की चौथी स्थिति आती है जब हम अवचेतन मन में जाते हैं। यहाँ ध्यान ज्ञानयोग का रूप ले लेता है और आत्म-विश्लेषण आरंभ होता है। आपके स्वभाव और व्यक्तित्व के क्या मुख्य पहलू और आदतें हैं? ये आदतें आपके अवचेतन मन और व्यवहार को प्रदर्शित करती हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य – ये अवचेतन मन में आते हैं। आप एक-एक चीज को देखते हो, उसका विश्लेषण करते हो, उसे बदलते हो, और इस प्रकार अपने अवचेतन में जो मोथे उत्पन्न होते हैं, उन्हें निकाला जाता है।

जैसे किसी दफ्तर में कम्पलेंट बॉक्स होता है जहाँ शिकायतें डाली जाती हैं, वैसे ही हम लोगों का अवचेतन मन भी है। जीवन में जो विकार हैं, वे चेतन मन में नहीं, अवचेतन मन में उत्पन्न होते हैं, और ध्यान की चौथी अवस्था में उनका परीक्षण, निरीक्षण और व्यवस्था की जाती है। ध्यान की यह अवस्था सबसे कठिन होती है, क्योंकि आपको अपने भीतर बैठे शैतान से सामना करना पड़ता है।

योगदर्शन के अनुसार हमारा अवचेतन मन प्रतिभाओं का भण्डार है, दुर्गुणों का नहीं, पर अच्छाई के भण्डार पर दुर्गुणों का आवरण है ताकि कोई वहाँ तक पहुँच

न सके। जैसे हम इस कमरे में दस टन सोना भर दें और सभी दरवाजों को बंद कर दें, वैसे ही हमारे भीतर अच्छाई भरी है, पर उसे बाँधा है बुराई के दरवाजों ने। ये छ: दरवाजें हैं काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य के। इसी कमरे के भीतर सब खजाना छिपा हुआ है, इसके द्वारों को पार कर लो तो स्वर्ण मिल जायेगा।

अगर तुम छ: दरवाजों को न भी तोड़ो, एक पर ही काम करो, क्रोध को ही शान्त कर लो, तो दरवाजा खुल जायेगा और तुम अन्दर आ पाओगे। तुम्हें बाकी पाँच के साथ लड़ने की आवश्यकता नहीं। बाकी पाँच दरवाजें बन्द रहें, खोलो एक को ही ताकि तुम अन्दर आ सको। जिस चीज पर तुम विजय प्राप्त कर सकते हो, उसे जीतकर अपने भीतर प्रवेश करो और खजाने को प्राप्त करो।

अगर हमारे मन में ईर्ष्या है तो उस ईर्ष्या को बदलकर हम आध्यात्मिक बन सकते हैं। अगर हमारे मन में क्रोध है तो उस क्रोध को परिवर्तित कर हम अपना खजाना प्राप्त कर सकते हैं। अगर अहंकार है तो उसे सम्भालकर हम जीवन में शान्ति के खजाने को प्राप्त कर सकते हैं। हमको केवल एक चीज के पार जाने का प्रयास करना है, और यह शिक्षा हमें तब मिलती है जब हम ध्यान करते हैं।

इसके बाद जब हम लोगों का अवचेतन मन इन चीजों से अप्रभावित रहता है तब अपने अवचेतन मन में गुणों का बीजारोपण किया जाता है। कौन-से गुण? स्वामी शिवानन्द जी ने स्पष्ट बतलाया है कि मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति में कौन-कौन सी मानसिक अवस्थायें बाधा बनती हैं और उनके स्थान पर कौन-से

गुण लाने चाहिए। वे कहते हैं कि लोभ को दानशीलता और उदारता के गुणों से सम्भाला जा सकता है। कामुकता का सामना करने के लिए अपने मन, भावना और हृदय को शुद्ध रखो। जब मन, हृदय और भावना शुद्ध है, तब कामवासना मनुष्य को कभी प्रभावित नहीं कर सकती। मन की चंचलता को त्राटक, प्राणायाम, उपासना और मंत्र-जप से नियंत्रित किया जा सकता है। मद का शमन विनम्रता के अभ्यास से करना है। चिड़चिड़ेपन और क्रोध को तितिक्षा एवं सहनशीलता के अभ्यास से काबू में लाना है। अगर तुम यह कर सकते हो तो तुम समाधि में लीन होकर कैवल्य पद प्राप्त करोगे। इस प्रकार स्वामी शिवानन्द जी ने अवचेतन मन की नकारात्मक प्रवृत्तियों का सामना करने का सूत्र दिया है।

योगदर्शन में इसे प्रतिपक्ष भावना कहा गया है। इसको ऐसे मानिये जैसे किसी आदमी ने बंजर जमीन का टुकड़ा खरीदा है और उसमें कंकड़-पत्थर, खर-पतवार सब कुछ है। ये कंकड़-पत्थर ही हमारे लोभ, कामुकता, मद आदि को दर्शाते हैं। जब हम उस जमीन को साफ करते हैं और नए बीज बोते हैं तो यह हो जाता है प्रतिपक्ष भावना – जो है, उसे हटाकर उसके विपरीत गुण वाली चीज का बीजारोपण करना। प्रतिपक्ष भावना का यह जो सिद्धान्त है, ध्यान में वह अवचेतन मन के साथ सम्बद्ध है।

उसके बाद फिर हम आते हैं अपने अचेतन मन के स्तर पर। यह हमारे संस्कारों और कर्मों का आयाम है। कर्मों का बंधन अचेतन स्तर पर होता है और कर्मों से मुक्ति पाने के लिए उन्हें अचेतन से चेतन स्तर पर लाकर हटाया जाता है। अचेतन स्तर पर ध्यान प्रक्रिया का यही प्रयोजन होता है – अपने कर्मों और संस्कारों का फाइन-ट्यूनिंग करना। जब संस्कारों और कर्मों की फाइन-ट्यूनिंग हो जाती है तो फिर हम ध्यान की चौथी अवस्था में प्रवेश करते हैं – आत्मानुभूति, जहाँ व्यक्ति अपनी अन्तरात्मा की पवित्रता और शुद्धि का साक्षात्कार करता है। तब ध्यान समाधि में बदल जाता है। समाधि संसार या शरीर से अलग होना नहीं, बल्कि मन की एक अवस्था है। गीता में इसका बहुत सुन्दर विवरण दिया गया है। दूसरे अध्याय में अर्जुन कृष्ण जी से पूछता है कि जो व्यक्ति समाधि को प्राप्त करता है वह फिर संसार में कैसे जीता है। श्रीकृष्ण जवाब देते हैं कि वह एक सामान्य मनुष्य की तरह ही संसार में जीता है, अंतर केवल इतना है कि सामान्य मनुष्य अपने बारे में सोचता है और समाधिस्थ मनुष्य दूसरों के बारे में। जो समाधि में नहीं है वह अपना हित चाहता है और जो समाधि में है वह दूसरों का हित चाहता है। स्वार्थ और नि:स्वार्थ – यही अंतर है। पूर्ण नि:स्वार्थता और निष्कामता की अवस्था को ही समाधि कहते हैं। इस तरह ध्यान की अंतिम अवस्था में हम फिर अपने जीवन के देदीप्यमान् प्रकाश का अनुभव करते हैं।

– अप्रैल 2014, मुम्बई

नेपालवासियों के नाम संदेश

जब यहाँ नेपाल में योग कार्यक्रम की संभावना बनी थी, तब उसी समय हमने यह निर्णय लिया था कि यहाँ पर हम योग प्रचार के लिये नहीं, बल्कि अपनी गुरुमाता की पावन मातृभूमि में अपनी श्रद्धा निवेदित करने आ रहे हैं। इस कार्यक्रम में जो चार दिन आपके साथ बीते हैं, उनमें हमें ऐसा अनुभव हुआ है कि नेपाल के निवासी संस्कृति और संस्कार के क्षेत्र में आगे हैं। जब किसी सभ्यता में संस्कृति और संस्कार खत्म होते हैं तब उस सभ्यता का नाश भी होता है। विश्व का इतिहास इस बात का गवाह है कि जिस-जिस सभ्यता की संस्कृति और संस्कारों का ह्रास हुआ है, वह सभ्यता आज इस धरती पर नहीं है। लेकिन जिस सभ्यता में संस्कृति और संस्कार हैं, वह विषम परिस्थितियों और संघर्षों से जूझते हुए भी अपने अस्तित्व को कायम रखे हुए है। नेपाल में हमने यह अनुभव किया कि आपके जीवन में संस्कृति है, संस्कार है और हमें विश्वास है कि इसके बल पर आपकी विजय होगी और आपके राष्ट्र में सुख, शांति, समृद्धि और ईश्वर का अनुग्रह प्राप्त होगा।

इस संस्कृति और संस्कार को दृढ़ करने के लिये पुरुषार्थ करने की आवश्यकता है। बाहर में नहीं, बल्कि अपने भीतर और इस भीतरी पुरुषार्थ को करने के लिये

हमें योग का सहारा लेना पड़ेगा। आज के इस युग में योगविद्या की आवश्यकता मनुष्य के मन, भावनाओं और कर्मों को व्यवस्थित करने के लिये है। योगविद्या की आवश्यकता मोक्ष या आत्मज्ञान के लिये नहीं, बल्कि अपने व्यवहार, विचार और कर्मों को परिष्कृत करने के लिये है। जब तक हमलोग योग को अपनी संस्कृति और संस्कार का आधार बनाकर रखेंगे, दुनिया की कोई भी शक्ति हमें हिला नहीं पायेगी। यही विचार हमारे परमगुरु स्वामी शिवानंद जी एवं हमारे गुरु स्वामी सत्यानंद जी का था, और आज उन्हीं के विचारों को मैं आपके सामने रख रहा हूँ ताकि आप भी इन विचारों को अपनायें और अपनी संकल्प शक्ति को जागृत कर अपने संस्कार और अपनी संस्कृति की रक्षा कर सकें। तभी आपका समाज और राष्ट्र उन्नति के पथ पर आगे बढ़ेगा और सुरक्षित रहेगा।

यह योग महोत्सव तो एक परिचय है और हम आशा करते हैं कि भविष्य में यहाँ आने के और भी अवसर मिलेंगे ताकि आपको इस योगविद्या के साथ जोड़ सकें और योग को संस्कृति के रूप में अपने जीवन में उतार सकें। यह विद्या केवल शारीरिक अनुभव नहीं, बल्कि उत्थान और विकास का सर्वांगीण अनुभव है। अपने संस्कार और संस्कृति को सुरक्षित रखने के लिये इसी सर्वांगीण अनुभव की प्राप्ति हमलोगों को करनी है।

अभी यहाँ पर हमारी परम्परा में प्रशिक्षित कुछ शिक्षक हैं, लेकिन इन्हें कोई दिशा-निर्देश नहीं है। इसलिये हमने एक निर्णय लिया है कि चाहे यहाँ पर हजारों शिक्षक क्यों न हों, हमारा एक अपना केन्द्र इस धरती पर अवश्य बनेगा, जिसका संचालन सीधे मुंगेर के माध्यम से होगा। उस केन्द्र में केवल आसन-प्राणायाम की नहीं, समग्र योगविद्या की शिक्षा होगी। इस धरती को हम यह वचन देते हैं।

हमारे गुरुजी का यह संकल्प है कि हमारी संस्था योगविद्या को व्यवसाय के रूप में नहीं चलाएगी। हमारा कार्य विद्या का, प्रेम का, स्नेह का, ईश्वर अनुग्रह का आदान-प्रदान है। इसलिये एक दिन हम इस धरती पर बिहार योग विद्यालय का झण्डा अवश्य गाड़ेंगे और वह स्वतंत्र रूप से यहाँ चलेगा। चाहे हजारों शिक्षक रहें और उनके सैकड़ों आश्रम रहें, उनसे हमें मतलब नहीं। बिहार योग विद्यालय के अंतर्गत इस संस्था का यहाँ स्वतंत्र रूप से संचालन होगा और इस संस्था के माध्यम से यहाँ की संस्कृति एवं संस्कार को मजबूत बनाने का प्रयत्न करेंगे। जब यह संभव होगा तो इस संगठन के माध्यम से इस राष्ट्र के विकास और उन्नति का भी एक सुन्दर स्वप्न देख पायेंगे। केवल देखेंगे ही नहीं, उसे यथार्थ में परिवर्तित करेंगे। ऐसा हम सबका संकल्प होना चाहिये। हम यही आशा करते हैं कि आप अपने जीवन में योग को एक अवसर अवश्य देंगे ताकि आपका जीवन एक सुन्दर उद्यान के रूप में बदल सके। यही हमारे गुरुजी का आशीर्वाद और वरदान भी है।

– जून 2014, काठमाण्डू

सभी गुरुओं और दैवी शक्तियों का मत

14 मई 2017 को पादुका दर्शन, मुंगेर में स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती को पद्मभूषण सम्मान प्रदान किये जाने के अवसर पर स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती का उद्बोधन

हरि: ॐ तत्सत्। आप सबको बधाई, क्योंकि स्वामी निरंजन जी को यह जो पद्मभूषण सम्मान मिला है, यह आप सबका भी है क्योंकि योग प्रचार में आप सबका योगदान रहा है। इसलिए सबसे पहले आप सबको गुरुदेव की ओर से बधाई। साथ ही देश के हरेक नागरिक को बधाई और धन्यवाद, ऐसा सुन्दर चयन करने के लिये।

यह केवल जनमानस का मत नहीं था, यह सब गुरुओं का मत था। जो धरती पर हैं और जो धरती पर नहीं हैं, जो अदृश्य हैं, उनका भी मत यही है कि स्वामी निरंजन जी को यह सम्मान दिया जाए। और केवल गुरुओं का ही नहीं, सब देवी-देवताओं का भी यह मत था कि हमारे प्यारे स्वामी निरंजन जी को यह सम्मान मिले।

हमारे साथ-साथ आप सब भी साक्षी रहे हैं गुरुदेव के उस कठिन परिश्रम के, जो उन्होंने योग प्रचार के लिये किया। साथ-साथ उनके कदमों पर चलते हुए स्वामी निरंजन जी का जो कठिन परिश्रम रहा है, जो त्याग और समर्पण का जीवन उन्होंने बिताया और अभी भी बिता रहे हैं, उसके साक्षी हम रहे हैं। कोई भी विशाल काम परिश्रम, त्याग और समर्पण के बिना सिद्ध नहीं होता। स्वामी शिवानन्द जी ने हमारे गुरुदेव की चेतना में एक विचार, एक बीज बोया। गुरुदेव ने फिर खेत तैयार किया, बीज बोए और उन्हें सींचा भी। जब उसमें सुगंध आने लगी वे उसका त्याग करके चले गये और स्वामी निरंजन जी उसका भार सम्हालने लगे। तब उनकी उम्र बहुत कम थी। इतनी कम उम्र में इतना बड़ा भार उठाना कोई मामूली चीज नहीं है। जब सब बच्चे खिलौनों के साथ खेलते हैं तब हमारे स्वामी निरंजन जी वेद और उपनिषद पढ़ रहे थे, अपनी इच्छा से! अत: यह पुस्कार केवल योग के लिये नहीं, बल्कि उस त्याग, समर्पण, श्रद्धा और विश्वास के लिए भी है जिसके स्वामी निरंजन जी जीते-जागते प्रतीक हैं।

सम्मान के साथ एक जिम्मेदारी भी आती है और उस जिम्मेदारी को अच्छी तरह से निभाना स्वामी निरंजन जी को आता है। चार बरस की उम्र से तो निभाते ही आये हैं और हम सबको पूरा विश्वास है कि आगे भी वे भूले-भटकों को राह दिखायेंगे।

हमारे स्वामी निरंजन जी, स्वामी सत्यानन्द जी और स्वामी शिवानन्द जी, जिन्होंने इस परम्परा को जान दी है, जिन्होंने इसकी पूरी तरह से देख-रेख की है, वे केवल मुंगेर के नहीं, केवल रिखियापीठ के नहीं, बल्कि वे तो विश्वव्यापक हैं।

आज यहाँ उपस्थित एक-एक व्यक्ति को यह अहसास हो रहा होगा कि यह बहुत ही पवित्र और सुन्दर क्षण है। ऐसे अमूल्य क्षण रोज-रोज प्राप्त नहीं होते। आज यह हमारा बहुत बड़ा सौभाग्य है यहाँ आने का, यह सब देखने का। इस समारोह पर हमारे गुरुदेव की और देवी माँ की कृपा बरसते रहे, उनसे हम सबको शक्ति प्राप्त होती रहे ताकि हम सत्कर्म के साथ अपने आप को जोड़ते रहें। नमो नारायण।

प्रत्याहार–द्वितीय अध्याय का आधार

हमलोग इस मुंगेर योग संगोष्ठी में जिस प्रधान विषय को लेकर चले हैं वह है प्रत्याहार। इससे आप लोगों को यह संकेत मिलना चाहिये कि योग के पहले अध्याय में आसन-प्राणायाम-शुद्धिकरण आदि क्रियाओं पर ध्यान दिया गया जो शारीरिक अभ्यास हैं। मानसिक अभ्यासों को भी लोगों ने किया, लेकिन उतनी सजगता और तन्यमता के साथ नहीं जितना वे शारीरिक अभ्यासों को करते हैं। इसीलिये आज सबके लिये योग मात्र एक शारीरिक क्रिया ही बनकर रह गई है जिसे लोग केवल अपनी योग कक्षा तक सीमित रखते हैं।

योग के दूसरे अध्याय का प्रयोजन योग विद्या को आत्मसात् करने का है, और आत्मसात् करने की यह प्रक्रिया वास्तव में प्रत्याहार से ही शुरू होती है। प्रत्याहार के पहले तक आप आसनों के साथ, प्राणायामों के साथ, अन्य विधियों के साथ प्रयोग करते रहते हैं, पर गहराई में कभी जाते नहीं। न प्रत्याहार की गहराई में जाते हैं, न ध्यान की गहराई में जाते हैं, न योग निद्रा की गहराई में जाते हैं। अगर हमें योग की विद्या को आत्मसात् करना है और इसके वास्तविक लाभों को प्राप्त करना है, इसके मूल उद्देश्य को जानना है तो द्वितीय अध्याय में प्रवेश करना होगा जिसका मुख्य आधार प्रत्याहार है। अन्य आधार भी हैं, लेकिन इस संगोष्ठी में पहला आधार प्रत्याहार को बनाया गया है क्योंकि इसका सम्बन्ध रहता है सम्पूर्ण मन को व्यवस्थित करने से, प्राणों को व्यवस्थित करने से, इन्द्रियों को व्यवस्थित करने से।

प्रत्याहार शब्द के दो अर्थ निकलते हैं। एक अर्थ निकलता है इसे प्रति+आहार समझने से और दूसरा अर्थ निकलता है प्रत्यय+हर के रूप में देखने से। दोनों परिभाषाएँ प्रासंगिक हैं। प्रति+आहार का तात्पर्य है कि जो चीज हमें बाहर से मिल रही है, उसे हम वापस करें। जो चिन्तायें-परेशानियाँ बाहर से आकर हमें प्रभावित कर रही हैं, हम अपने मन को उन चिन्ताओं और परेशानियों से मुक्त कर दें और उन्हें अपने से बाहर ढकेल दें। इसको कहते हैं प्रति+आहार, वापस करना। तुम हमें एक वस्तु देते हो, हम वह वस्तु तुम्हें पुन: देते हैं, यह है प्रत्याहार, वापस कर देना।

दूसरी परिभाषा है प्रत्यय+हर। प्रत्यय हमारे अनुभवों की वह छाप है जो हमारे मन में बीज रूप में पड़ जाती है। उसको भी जड़ से निकालने का प्रयास करना है। योग दर्शन में समझाया गया है कि प्रत्ययों को जड़ से निकालने के लिये पहले अपनी वृत्तियों को जानो। मन का जो स्वभाव प्रकट हो रहा है उसको पहले देखो, और उसे देख करके उसे व्यवस्थित करो, उसे सकारात्मक बनाओ। उसमें जो नकारात्मक दोष है उसे हटा दो। अगर हम इस प्रकार प्रत्ययों के दोषों को हटा देते हैं तो वास्तव में वह प्रत्याहार है।

प्रत्याहार के अभ्यास से ही मनुष्य शान्ति का अनुभव करता है, धारणा या ध्यान के अभ्यास से नहीं। ध्यान का प्रयोजन शान्ति प्रदान करना नहीं है, वह तो बहुत आगे की क्रिया है। अशान्ति कहाँ उत्पन्न होती है, चंचलता कहाँ उत्पन्न होती है? मन, बुद्धि और चित्त की ऊपरी सतह में। इस ऊपरी सतह के द्रष्टा बनकर जब हम इन प्रत्ययों का निर्मूलन कर देते हैं तो वृत्तियाँ शान्त हो जाती हैं, चंचलता समाप्त होती है और उसके बाद फिर हम ध्यान में प्रवेश कर पाते हैं। इसलिए अपने मन, इन्द्रियों और प्राणों को संभालने के लिये जो सर्वश्रेष्ठ विधि है वह है प्रत्याहार। यही हमलोगों को समझना है।

प्रत्याहार की प्रथम अवस्था है, इन्द्रियों की चंचलता को शान्त करना। इसलिये कायास्थैर्यम् के अभ्यास में एक-एक इन्द्रिय को देखकर उसे स्थिर बनाने का, शान्त करने का प्रयत्न करना है। उसके बाद मन, बुद्धि , चित्त और अहंकार से जो चंचलता की स्थिति उत्पन्न होती है, आवेग उत्पन्न होते हैं, उनको सम्भालना दूसरा प्रत्याहार है। तीसरा प्रत्याहार होता है प्राणों का। ये सब प्रेरित करते हैं कि मनुष्य स्वयं का साक्षात्कार करे। जब आत्म-साक्षात्कार की बात होती है तो आप हमेशा इस सिद्धांत को भगवान से जोड़कर कहते हो कि आत्म-साक्षात्कार का मतलब है आत्मा को जान लेना, परमात्मा को जान लेना। कोई भी व्यक्ति नहीं कहता कि आत्म-साक्षात्कार का अर्थ होता है अपने मन के व्यवहार को जानना। यहीं पर आप मार खाते हो और उत्थान भी अगर होगा तो यहीं से होगा। योग की जितनी भी शिक्षाएँ हैं वे सब कहती हैं कि मन के विचार और व्यवहार, दोनों को ठीक करो। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य – मन की इन छः अवस्थाओं से

हर व्यक्ति प्रभावित है, लेकिन इन छ: अवस्थाओं से मुक्ति का साधन कोई नहीं खोजता। हम अपनी नाक कैसे पकड़ें, आदमी वह जानना चाहता है, लेकिन मन को पकड़ना कोई नहीं जानना चाहता। मन की विषम परिस्थितियों से मुक्त कोई नहीं होना चाहता है, लेकिन एकाग्र सब होना चाहते हैं। मन की विषम परिस्थिति को कोई संभाल नहीं सकता है, लेकिन आध्यात्मिक चेतना से सभी युक्त होना चाहते हैं। साधकों में इससे बढ़कर विडम्बना क्या हो सकती है?

प्रत्याहार को सिद्ध करने के लिये आँखें बन्द करना, ध्यान में बैठना, जमीन पर शवासन में लेट जाना, शरीर को आराम देना – यह सब आवश्यक नहीं है, बल्कि स्वयं को देखना और हर परिस्थिति में जो प्रत्यय मन में बन रहे हैं उन प्रत्ययों को हटाते जाना है। यही साधना हमारे परम गुरुदेव, स्वामी शिवानन्द जी हमेशा किया करते थे। उन्होंने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि 'मेरे मन में कभी भी किसी के लिये दूषित विचार नहीं आते हैं, क्योंकि मैं उन्हें आने ही नहीं देता हूँ। जब भी मुझे आभास होता है कि मेरा मन सकारात्मकता से मुख फेर रहा है, मैं उसे पुन: खींचकर सकारात्मकता से जोड़ देता हूँ। जो बुराई है उसको अच्छाई में परिवर्तित करता हूँ, जो कमजोरी है उसको सामर्थ्य में परिवर्तित करता हूँ। यही मेरे जीवन का योग है, यही मेरे जीवन की साधना है।'

अपने मन को संभालने के लिये मन की सकारात्मकता को सतत् बनाये रखना, यही उनका मार्ग है और इसके लिए उन्होंने उपाय भी बतलाया है, प्रतिपक्ष भावना। क्रोध आये तो उसे शान्ति में परिवर्तित करो। हिंसा की भावना उत्पन्न होती है तो उसे अहिंसा में परिवर्तित करो। द्वेष और अलगाव की भावना होती है तो उसे प्रेम और सहयोग की भावना में परिवर्तित करो। प्रत्याहार सिद्ध करने के लिये हमलोगों को प्रतिपक्ष भावना को एक साधना के रूप में अपनाना है। प्रत्याहार केवल आँखों को बन्द करने से सिद्ध नहीं होता, बल्कि अपने मन की तामसिक अवस्था को सकारात्मक बनाने से अधिक सिद्ध होगा। आखिर आँखें बन्द करके आप कर क्या रहे हो? केवल देख रहे हो, लेकिन जब आप नकारात्मक को सकारात्मक में बदलने का एक प्रयत्न करते हो तो एक विधि से गुजरते हो और वह विधि आपको पूर्णता की ओर ले जाती है। इसको कहते हैं प्रत्याहार।

यह हमलोगों के द्वितीय अध्याय का प्रथम चरण है। परेशानी, चिन्ता और दु:ख की जितनी भी अवस्थाएँ हैं, इन सबका स्रोत शरीर तो नहीं है, बल्कि इन सबका उत्पत्ति केन्द्र मन है। मन विविध अस्त्रों-शस्त्रों के साथ सुसज्जित है, कभी तीर चलाता है तो कभी तलवार भी चलाता है। इसी को संभालने का जो तरीका है वह है प्रत्याहार और इस योग संगोष्ठी में हमलोग इसी पर थोड़ा ज्यादा जोर दे रहे हैं ताकि प्रत्याहार के विभिन्न बिन्दुओं को हम अपने सामान्य जीवन में लागू कर सकें।

– अक्टूबर 2018, मुंगेर योग संगोष्ठी

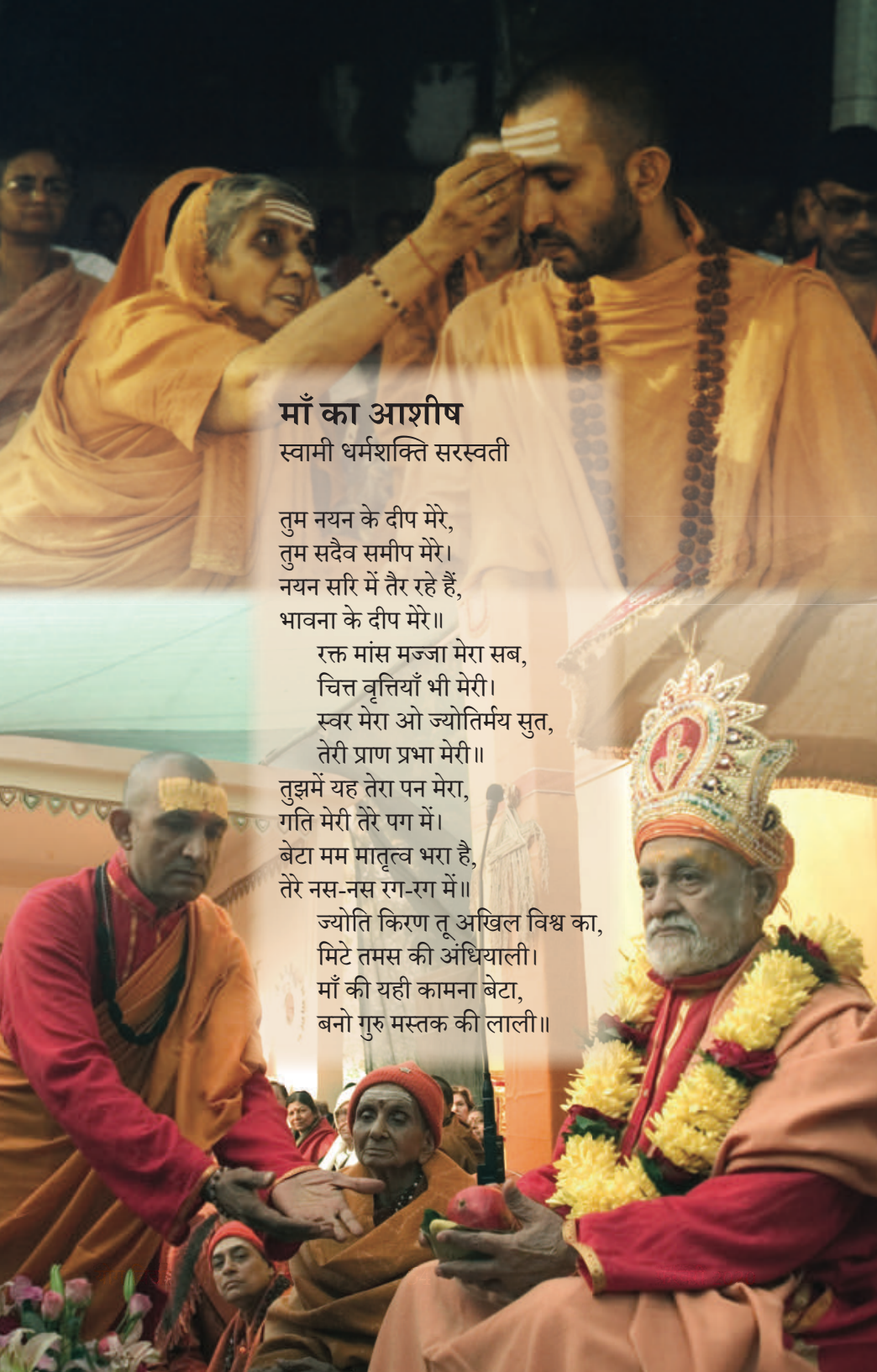

माँ का आशीष

स्वामी धर्मशक्ति सरस्वती

तुम नयन के दीप मेरे,
तुम सदैव समीप मेरे।
नयन सरि में तैर रहे हैं,
भावना के दीप मेरे॥

रक्त मांस मज्जा मेरा सब,
चित्त वृत्तियाँ भी मेरी।
स्वर मेरा ओ ज्योतिर्मय सुत,
तेरी प्राण प्रभा मेरी॥

तुझमें यह तेरा पन मेरा,
गति मेरी तेरे पग में।
बेटा मम मातृत्व भरा है,
तेरे नस-नस रग-रग में॥

ज्योति किरण तू अखिल विश्व का,
मिटे तमस की अंधियाली।
माँ की यही कामना बेटा,
बनो गुरु मस्तक की लाली॥

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

गीता दर्शन

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

पृष्ठ 245, ISBN: 978-93-81620-09-0

श्रीमद्भगवद्गीता के पहले, बारहवें और पन्द्रहवें अध्याय पर स्वामी निरंजनानन्द की प्रस्तुत टीका जटिल दार्शनिक विवेचन नहीं, वरन् भवसागर की उत्तुंग लहरों में जूझते मानव की सहायता के निमित्त बढ़ा हाथ है। योग की पृष्ठभूमि में सरल भाषा, व्यावहारिक दृष्टि और मनोवैज्ञानिक युक्तियों की प्रस्तुति ने गीता के गूढ़ ज्ञान को सर्वसुलभ बना दिया है। नित्य अध्यवसाय के लिए उपयुक्त यह ग्रन्थ पग-पग पर साधक के विचारों, भावनाओं और कर्मों को उचित दिशा में प्रेरित कर शाश्वत सुख, शान्ति और आनन्द की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करता है।

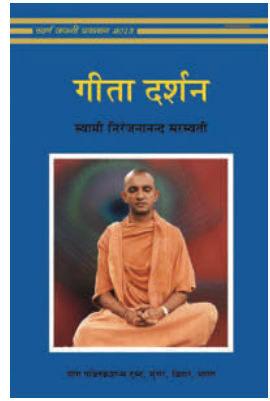

उपलब्ध

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें –
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
दूरभाष : 91–6344–222430, 9162783904

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा

वेबसाइट और एप्प

SATYANANDA YOGA
BIHAR YOGA

www.biharyoga.net

बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर सत्यानन्द योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती तथा योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद

मुंगेर योग संगोष्ठी 2018 के अवसर पर स्वामी सत्यानन्द जी एवं स्वामी निरंजनानन्द जी की समस्त प्रकाशित कृतियाँ *www.satyamyogaprasad.net* वेबसाइट पर तथा *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में प्रस्तुत की जा रही हैं।

बिहार योग विकी

मुंगेर योग संगोष्ठी 2018 के अवसर पर ऑनलाइन विश्वकोश *www.yogawiki.org* प्रस्तुत किया जा रहा है जहाँ सभी साधकों के लिए यौगिक शिक्षाएँ सुगम रूप में उपलब्ध होंगी।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन

www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/

योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)

- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, ए.पी.एम.बी. अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है
- बिहार योग एप्प साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है

- Registered with the Department of Post, India
  Under No. MGR-01/2017
  Office of posting: Ganga Darshan TSO
  Date of posting: 1st–7th of every month
- Registered with the Registrar of Newspapers, India
  Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

योगपीठ कार्यक्रम एवं योग विद्या प्रशिक्षण 2020

फरवरी 9–13	योग कैप्सूल–श्वास सम्बन्धी (हिन्दी)
फरवरी 9–13	योग कैप्सूल–गठिया सम्बन्धी (हिन्दी)
फरवरी 14	बाल योग दिवस
फरवरी 23–27	योग कैप्सूल–पाचन सम्बन्धी (हिन्दी)
फरवरी 23–29	पूर्ण स्वास्थ्य कैप्सूल (हिन्दी)
फरवरी–मार्च	द्विमासिक यौगिक अध्ययन (हिन्दी)
मार्च 14–20	हठ योग यात्रा 1 एवं 2
अप्रैल 1–30	एकमासिक योग प्रशिक्षण (हिन्दी)
अप्रैल 4–8	योग जीवनशैली कैप्सूल (हिन्दी/अंग्रेजी)
अप्रैल 13–19	राज योग यात्रा 1 एवं 2
सितम्बर 19–25	राज योग यात्रा 1 एवं 2
अक्टूबर 1–30	बिहार योग शिक्षकों के लिए प्रगतिशील प्रशिक्षण 1 (अंग्रेजी)
नवम्बर –जनवरी 2021	त्रिमासिक योग अध्ययन (अंग्रेजी)
नवम्बर 2–8	क्रिया योग यात्रा 1 एवं 2
नवम्बर 21–27	हठ योग यात्रा 1 एवं 2
दिसम्बर 2–6	योग जीवनशैली कैप्सूल (हिन्दी/अंग्रेजी)
दिसम्बर 25	स्वामी सत्यानन्द जन्मदिवस
जनवरी 3–6 2021	योग चक्र शृंखला (अंग्रेजी)
प्रत्येक शनिवार	महामृत्युंजय हवन
प्रत्येक एकादशी	भगवद् गीता पाठ
प्रत्येक पूर्णिमा	सुन्दरकाण्ड पाठ
प्रत्येक 4, 5 एवं 6 तारीख	गुरु भक्ति योग
प्रत्येक 12 तारीख	अखण्ड रामचरितमानस पाठ

उपर्युक्त सत्रों/ कार्यक्रमों के सम्बन्ध में विशेष जानकारी के लिए सम्पर्क करें–

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
फोन : 06344-222430, 9162783904
वेबसाइट : www.biharyoga.net

कार्यक्रमों एवं प्रशिक्षणों के आवेदन-पत्र यहाँ उपलब्ध हैं

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु अपना पता लिखा और डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा